उन्नत ग्राम का

उन्नतिशील जीवन

रमेशचन्द्र पाण्डेय

Y31·2-1
J0
30756

विषय सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
१—हमारे गांव	१—५
२—ग्राम्यावस्था	६—१९
३—उन्नत ग्राम	२०—३७
४—उन्नतिशील जीवन	३८—४१

हमारे गांव

हमारे गांव हमारी वास्तविकता के यथार्थ चित्र हैं। वे भारत देश की विभूति हैं। परम योग की दिव्य शक्ति, अणिमा, महिमा, लघुमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईषित्व और वशित्व उनमें केन्द्रित हैं। वही हिन्दुस्थान है। वास्तविक हिन्दुस्थान गांवों में ही है। उनका उत्थान और पतन भारत देश के प्रगति एवम् अधोगति के चिन्ह मात्र हैं। स्वतंत्रता पाने के उपरान्त से सकल विश्व की आँखें हम भारत पर लगी देखते हैं। प्रायः संसार के सभी देश भारत की समृद्धि की वृद्धि की ओर टकटकी बांधे खड़े हैं और सब का विचार है कि यदि भारत राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक एवम् सामाजिक क्षेत्रों में आगे की ओर कदम नहीं उठाता तो उसका विनाश निश्चित है और इनमें से किसी भी मार्ग पर जाने के लिये हमें आधार गांव ही को बनाना है। हमारे देश के आधार तो वही हैं–अतः हमारे आज के उन्नायकों का कार्यक्षेत्र भारतीय ग्राम है—अथवा होना चाहिये। भारतीय ग्राम अतीत की सभ्यता के गीत हैं और उनमें "वसुधैव कुटुम्बकम्" की छाया दृष्टिगोचर होती है।

अतीत के वे चलचित्र केवल चित्र ही रह गए हैं। समय के साथ उन्होंने करवट नहीं बदली। वे आज के भारतीय ग्राम उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम दशाब्दियों से भी पूर्व का रूढ़त्व अपनाए हुए हैं। रूढ़िवाद उनके जीवन का एक अंग बन गया है और उनके उन्नति के मार्ग में रोड़ा अटकाये हुए है। उनके राजनैतिक, धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक रीतियों और दृष्टि-कोण में एक इन्कलाब की जरूरत है और बिना उनमें परिवर्तन लाये हुये हम भारत भाग्य विधाता की कुपित दृष्टि में परिवर्तन नहीं ला सकते। आज के भारतीय ग्राम क्या हैं? गन्दगी का एक अड्डा, अशिक्षा एवम् अविद्या का एक केन्द्र, जीर्ण और दीनावस्था की एक प्रतिमूर्ति और परिहास की एक छायालिपि। घरों के नाम पर खंडहर हैं। मिट्टी की दिवारों में सीलन और फूस के छत से टपकती हुई पावस की बूंदें अथवा ग्रीष्म मार्तंड की किरणें। वहां जीव हैं पर जीवन नहीं। संध्या बीतने नहीं पाती और लोग अंधकार से घिर उठते हैं। रात के प्रकाश का कोई सुविधाजनक प्रबन्ध नहीं है। यदा कदा मिट्टी के तेलों की लालटेनें और रेंडी अथवा सरसों के तेलों का चिराग टिमटिमाता रहता है। रात्रि के प्रथम प्रहर के व्यतीत हो जाने पर उसका भी अवसान हो उठता है और फिर घोर निशा में ग्राम सोता रहता है। उसकी दयनीय दशा एवम् करुणावस्था का उपचार आवश्यक है और तब जब कि १९४१ के जनगणना के अनुसार भारत की ८७ प्रतिशत जनसंख्या गांवों में वास करती है। संयुक्त भारत के १५,८१,४१० वर्गमील के क्षेत्रफल में केवल २,७०३ नगर थे। जब कि ग्रामों की संख्या ६,५५,८९२ थी। ७,६०,३५,३४५ घरों में से ६,६४,३६,०९४ घर गांवों में और ९५,९९,२५१ घर नगरों में थे। १९४१ के जनगणना के अनुसार ३८,८९,९७,९५५ व्यक्तियों में से ३३,९३,०१,९०२ व्यक्ति गांवों में और ४,९६,९६,०५३ व्यक्ति नगरों में निवास करते थे। उत्तर प्रदेश के १,०६,२४७ वर्गमील में ४४५ नगर एवम् उपनगर और १,०२,३८८ गांव हैं। नगरों की कुल जनसंख्या ५,५०,२०,६१७ में ६८,५५,२६८ है जब कि गांवों में ४,८१,६५,३४९ व्यक्ति रहते हैं। गांवों में ९६,१९,७७८ और नगरों में १३,०५,२९९ घर हैं। उत्तर प्रदेश के ५१ वें जिले की कृति अथवा टेहरी–गढ़वाल और रामपुर के विलीनीकरण के पश्चात उत्तर प्रदेश की जनसंख्या में और भी वृद्धि हो गई। उसके क्षेत्रफल में भी वृद्धि हुई। टेहरी गढ़वाल एक पूर्णरूपेण ग्रामीण क्षेत्र है। १९३१ के जनगणना के अनुसार निम्नांकित चार्ट द्वारा जनसंख्या की दृष्टि से ग्राम और नगर का अनुपात किया जा सकता है।

प्रान्त	नगर	गांव	गांव की औसत जनसंख्या
ब्रिटिश भारत ..	६.५	९३.५	३५५
बंगाल	१.७	९८.३	३७९
बिहार और उड़ीसा ..	१९.०	८१.०	६१२
बम्बई	११.८	८८.२	६७८
मद्रास	९.३	९०.७	६७८
ब्रह्मा	९.३	९०.७	२९२
मध्य प्रान्त	८.५	९१.५	३२७
पंजाब	११.८	८८.२	५३१
उत्तर प्रदेश	१०.२	८९.८	४००

१९४१ की जनसंख्या के अनुसार प्रान्त और रियासतों में गावों की दशा।

प्रान्त	वर्गमील में क्षेत्रफल	गांवों की संख्या	घरों की संख्या	जनसंख्या
भारतवर्ष ..	१५,८१,४१०	६,५५,८९२	६,६४,३६,०९४	३३,९३,०१,९०२
मद्रास ..	१,२६,१६६	३५,४३०	८१,७३,१४६	४,१४,७६,९२७
बम्बई ..	७६,४४३	२१,४७२	३४,८७,४६८	१,५४,३७,६७१
बंगाल ..	७७,४४२	८४,२१३	१,००,३०,९९२	५,४३,६७,७४९
उत्तर प्रदेश ..	१,०६,२४७	१,०२,३८८	९६,१९,७७८	४,८१,६५,३४९
आगरा ..	८२,१७६	७८,९७१	६९,३४,०८१	३,५१,९७,३५४
अवध ..	२४,०७१	२३,४१७	२६,८५,६९७	१,२९,६७,९९५
पंजाब (संयुक्त) ..	९९,०८९	३५,२६९	४६,४४,८०२	२,४०,५९,८५५
बिहार ..	६९,७४५	६८,८६९	६५,४३,६१४	३,४३,८३,९३२
मध्य प्रान्त और बरार	९८,५७५	३८,९८५	२९,७९,४५१	१,४७,१९,८१७

प्रान्त		वर्गमील में क्षेत्रफल	गांवों की संख्या	घरों की संख्या	जनसंख्या
आसाम	..	५४,९५१	३३,५६०	१९,४८,८२४	९९,२४,१११
उड़ीसा	..	३२,१९८	२६,६५३	१८,१६,७२२	८४,०७,७४३
अजमेर मेरवाड़ा		२,४००	७०६	६३,०७८	३,६९,५९५
कुर्ग	..	१,५९३	३०१	३०,६१२	१,५७,५०८
दिल्ली	..	५७०	३०५	४०,९४२	२,२२,२५३
पंथ पिपलोड़ा	..	२५	१२	१,१६२	५,२६७
अंडमान और निकोवार	..	३,१४३	१८२	५,६३७	३३,७६८

ऊपर के आंकड़ों से यह स्पष्ट है कि हिन्दुस्थान के लगभग २.४ वर्गमील के भू–भाग में एक ग्राम स्थित है। उत्तर प्रदेश के लगभग १.०८ वर्गमील में एक गांव बसा हुआ है। इतना स्पष्ट कर देना आवश्यक होगा कि उपर्युक्त क्षेत्रफल गांव के क्षेत्रफल का औसत नहीं। प्रत्येक भारतीय ग्राम में लगभग १०१.२ घर और ५१७·३ व्यक्ति हैं। उत्तर प्रदेश में औसतन प्रत्येक ग्राम में ९३.९ घर और ४७०.४ लोग हैं। १९४१ की गणना के अनुसार भारत में १,००० घर पीछे ५,११६ निवासी थे। १०० वर्गमील के क्षेत्रफल में औसतन ४,८०८ घर थे। उत्तर प्रदेश में भी प्रति सौ वर्गमील पीछे १०,२८३ घर और प्रति १,००० घर पीछे ५,०३६ व्यक्ति थे। इस तरह हम देखते हैं कि उप–महाद्वीप भारत यद्यपि गांवों में बसा हुआ है, पर यहां की प्रत्येक वर्गमील की आबादी विश्व के कुछ ही राष्ट्रों से कम है। निम्नांकित चार्ट इस बात का स्पष्ट प्रमाण है :—

देश		प्रति वर्गमील जनसंख्या	गणना का अंतिम वर्ष
१ इंगलैंड और वेल्स	..	६८५	१९३१
२ फ्रांस	..	१९७	१९३६
३ जर्मनी	..	३८२	१९३९
४ वेल्जियम	..	७०८	१९४४
५ स्पेन	..	१३८.३	१९४५
६ डेनमार्क	..	२२४	१९४०
७ इटली	...	३८१	१९४३
८ रूस	....	२०·८	१९३९
९ चीन	...	१०२	१९३६
१० जापान साम्राज्य	...	४२६	१९३५
११ दक्षिणी अफ्रीकी संघ	...	२०	१९३६
१२ मिश्र	....	४५	१९४३
१३ आस्ट्रेलिया	....	२·२३	१९३३

देश		प्रति वर्गमील जनसंख्या	गणना का अंतिम वर्ष
१४ न्यूजीलैन्ड	...	१५	१९३६
१५ अर्जेन्टाइन रिपब्लिक	...	१३	१९४५
१६ ब्राजील	....	१२.६	१९४०
१७ संयुक्त राज्य	....	४०.८	१९४०
१८ कनाडा	...	३	१९४१
१९ मेक्सिको	....	२५	१९४०
२० भारतवर्ष	...	२४६	१९४१

जन संख्या के दृष्टिकोण से भारत सकल विश्व में द्वितीय स्थान रखता है और चीन सर्वप्रथम, पर प्रति वर्ग मील आबादी की दृष्टि से भारत चीन को बहुत पीछे छोड़ देता है और बेल्जियम, इंगलैंड, जापान, जर्मनी और इटली के पश्चात् छठा स्थान ग्रहण करता है। उपर्युक्त सभी देश यद्यपि बहुत घने बसे हुए हैं किन्तु सभी यथेष्ट समृद्धिशाली हैं। यद्यपि विगत महायुद्ध ने उन सभी विजयी अथवा विजित देशों पर अपनी एक छाया छोड़ दी है परन्तु फिर भी वे वैभवहीन नहीं। आबादी के दृष्टिकोण से भले ही भारत द्वितीय हो और घनत्व के दृष्टि से चाहें वह उच्च भौतिक राष्ट्रों में अपना नाम लिखाता हो पर जहां तक वैभव का प्रश्न है वह संसार के सभी उन्नतितम राष्ट्रों से पीछे आता है। मद्रास सरकार के आर्थिक परामर्शदाता श्री नटराजन के अनुसार आज प्रत्येक भारतीय की आय ७॥) से बढ़कर दस वर्ष में २२८॥) हो गई है किन्तु उसकी वास्तविक आयः (per capital real income) केवल ६॥।) है। अतएव हम कह सकते हैं कि इस युद्धकाल में प्रत्येक भारतीय औसतन आय में १० प्रतिशत का अभाव हुआ। यहां यह भी कहना आवश्यक होगा कि जन संख्या तीव्र गति से बढ़ रही है। उत्तर प्रदेशीय सरकार के अर्थ परामर्शदाता तथा संख्या संचालक श्री जुगुल किशोर पांडेय* के अनुसार उत्तर प्रदेशीय जन संख्या १९४१ में १९३१ के ४,८४,०८,७६३ से बढ़कर ५,५०,२०,६१७ हो गई तो इसी अनुपात में वह १९५१ में ६,२५,३६,००० हो जायगी। उन्हीं के अनुसार इस प्रान्त के गांवों की आबादी ४१ के ४.८१ करोड़ से बढ़कर १९५१ में ५.२१ करोड़ हो उठेगी। संयुक्त राज्य संघ के जनसंख्या समिति के मंत्री डाक्टर चन्द्रशेखरन् ने कुछ ही दिन पूर्व नई दिल्ली में आंका कि १८७२ से जबकि भारत वर्ष में प्रथम बार जनगणना हुई थी, भारत विभाजन के पूर्व तक ५४ प्रतिशत की वृद्धि हुई। १९२१ से १९३१ तक १०.६ प्रतिशत की वृद्धि रही और १९३१ से १९४१ के बीच में १५.१ प्रतिशत से हमारी आबादी बढ़ी। इस हिसाब से उनके अनुसार ३५ वर्ष में हमारी आबादी दुगुनी हो उठेगी। हमारी बढ़ती हुई आबादी हमारे लिये एक समस्या है यद्यपि अर्थ शास्त्र के कुछ महापंडित और चोटी के कुछ दिग्गज राजनीतिज्ञों का विश्वास है कि भारत की जनसंख्या कम है (Under populated) पर कार साण्डर्स के अनुसार "अधिक जनसंख्या का अर्थ समस्त वास्तविकता के विरुद्ध अधिक व्यक्तियों का होना है"। (Over population means that there are too many people in relation to the whole set of facts) और जनसंख्या शास्त्र के महापंडित श्री ज्ञान चन्द्र के अनुसार "यदि हम भारत की तमाम बातों का निरीक्षण करें तो देश में बहुत मनुष्य हैं" (If we review the whole set of facts in India, there are too many people in the country) § हम यह मानने के लिये पूर्णतया तैयार हैं कि भारतवर्ष में इतना साधन विद्यमान है कि यदि उनका पूर्णरूपेण उपयोग किया जाय तो भारत की वर्तमान जनसंख्या के कई गुने के लिये एक ही दिन का उत्पादन पर्याप्त

* Growth of Population Consumption and Production—J. K. Pande.

§ The Problem of Population—Prof. Gyan Chand.

होगा। यदि हम केवल अरब, बंग और हिन्द महासागर के साधनों को एकत्रित कर सकें तो सकल विश्व की कई गुनी आबादी को खिला सकते हैं; परन्तु वर्तमानावस्था में हमारा उपलब्ध हमारे ही लिये नहीं यथेष्ट है। अतः यह सरलता से कहा जा सकता है कि भारत की आबादी अधिक है।

अब एक दृष्टि भारतीय ग्रामों की जनसंख्या के वितरण की ओर डालना भी आवश्यक होगा। यदि पूरी आबादी १०० मान ली जाय तो उसका वितरण नगर और ग्राम में निम्नलिखित अनुपात में हुआ :—

वर्ष			ग्राम	नगर
१८९१	..	..	९०.५	९.५
१९०१	..	..	९१.१	९.९
१९११	..	..	९०.६	९.४
१९२१	..	..	८९.८	१०.२
१९३१	..	..	८९	११
१९४१	..	..	८७	१३

ऊपर के आंकड़ों से यह स्पष्ट है कि नगरों की जनसंख्या बढ़ी और ग्रामों की जनसंख्या उसके अनुपात में घटती गई। इसका प्रमुख कारण है नगरों का विकास, आधुनिक सभ्यता का जन्म और लोगों का ग्राम छोड़ कर नगरों को जाना। वे गांव छोड़ कर नगर की ओर क्यों भागे इसको स्पष्ट करने के लिये आज के भारतीय गांव और गांव वालों की सामाजिक, राजनैतिक एवम् आर्थिक झांकी खींचना आवश्यक होगा। यदि हम उपर्युक्त सारिणी की अनुक्रमणिका निकालें और १८९१ को आधार वर्ष मान कर गांव की आबादी १०० मान लें तो हम निम्नांकित कोष्ठक द्वारा गांव की आबादी का उतार चढ़ाव माप सकते हैं :—

वर्ष	जनसंख्या
१८९१	१००
१९०१	९९.५६
१९११	१००.११
१९२१	९९.२३
१९३१	९८.३४
१९४१	९६.१४

ऊपर के आंकड़े से यह स्पष्ट हो उठता है कि १९११ के पश्चात गांव की जनसंख्या का प्रचुर अंश नगरों की ओर भागा। १९२१ से १९४१ तक गांव के लगभग ३.१२% लोग नगर की ओर आये। इस तरह से भारतीय गांवों से लगभग ६ लाख अथवा .१५% लोग प्रति वर्ष गांव छोड़ जीविकोपार्जन के निमित्त नगर के लिये प्रयाण कर देते हैं।

ग्राम्यावस्था

सभ्यता एवम् संस्कृति से निर्वासित भारतीय ग्रामों में आजकल जीवन की चहल पहल नहीं। ग्रामों में जाति कुल एवम् कीर्ति पर गर्व रहता है। दारिद्र्य, अविद्या, अशिक्षा परतंत्रता, रौरव के सभी कीट यहां व्यापक हैं। यह है ग्राम की सामाजिक दशा जिसका पूर्ण अवलोकन करना आवश्यक होगा।

हिन्दुस्तान (संयुक्त) के ग्रामों में प्रत्येक १०,००० व्यक्ति पीछे ६,५९४ हिन्दू, २,३२२ मुसलमान, १४४ ईसाई, २५ जैन और ९१५ अन्य व्यक्ति जिनमें सिख, पारसी, यहूदी सभी शामिल हैं। यों संयुक्त भारत में ६४ प्रतिशत हिन्दू, २७ प्रतिशत मुसलमान, ३.५ प्रतिशत बौद्ध, १ प्रतिशत सिख, ४ प्रतिशत जैन, १ प्रतिशत ईसाई, .०३ प्रतिशत पारसी, २.५ प्रतिशत एनिमिस्ट थे। निम्नलिखित सारिणी के अनुसार भारत की जनसंख्या का बटवारा किया जा सकता है :—

धर्म		भारत और पाकिस्तान	रियासतें (करोड़ में)	प्रतिशत (१०० में)
सवर्ण हिन्दू	..	१५.०९	५.५२	६४
हरिजन	..	३.९९	.८९	
मुसलमान	..	७.९४	१.५०	२७
सिख	..	.४२	.१५	१
ईसाई	..	.३५	.२८	१
ट्राइब्स	..	१.६७	.८७	...
अन्य	..	.१२	.१०	...

विभाजित भारत में लगभग २३ करोड़ व्यक्ति हैं। रियासतों की कुल आबादी ८ करोड़ में से लगभग ७ करोड़ ८० लाख लोग उन रियासतों में रहते हैं जिन्हें भारत में शामिल कर लिया गया है। पाकिस्तान की जनसंख्या लगभग ८ करोड़ है जिनमें अधिकांश मुसलमान हैं। खंडित भारत में तीन करोड़ से कम ही मुसलमान हैं। इस तरह से आज के हिन्दुस्तान की जनसंख्या में ७० प्रतिशत से अधिक लोग हिन्दू हैं। बंटवारे के बाद यद्यपि गांवों की जनसंख्या में भेद पड़ गया होगा किन्तु यह कहना अनुचित न होगा कि हिन्दू ग्रामों से शायद ही एक प्रतिशत मुसलमान पाकिस्तान गये हों। यह ठीक है कि शहर के मुसलमानों ने अपना देश छोड़ा पर गांवों के मुसलमान आज भी वहीं हैं, जहां थे।

धर्म भेद के पश्चात् नगर और गांव सभी स्थानों पर लोग भिन्न-भिन्न जातियों में बंटे हुये हैं। हिन्दुओं में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, एवम् शूद्र वर्णों की अनेकानेक उपजातियां हो गई हैं। कोई २० बिस्वा का कान्यकुब्जी है तो कोई सरजूपारी। जाति गोत्र न जाने कितने भेद हैं। कोई चतुर्वेदी है तो कोई त्रिवेदी और फिर कोई द्विवेदी और मजा तो यह है कि शायद ही कोई चतुर्वेदी एक वेद भी जानता हो। क्षत्रिय में भी पाल वंशी, हैहय वंशी, चन्द्रवंशी, सूर्य वंशी, यदुवंशी इत्यादि भेद हो उठे हैं। वैश्य और शूद्र भी इसी तरह विभक्त हैं। मुसलमानों में सैयद, शेख, पठान, धुनिया और बेहना और इसके उपरान्त अन्य अनेक उपजातियां हैं। सिक्खों में भी छूत और अछूत का प्रश्न है। सवर्ण और अवर्ण का भेदभाव इतना अधिक बढ़ गया है कि कहा नहीं जा सकता। अपनी पुस्तक वरडिक्ट आन इंडिया (Verdict on India) में बेवरली निकोलस भारत के जाति भेद पर व्यंग करते हुये लिखता है "एक ही प्याले में पीना अध्यात्मिक विष होगा, उनकी छाया ही अपवित्र है उनमें से कुछ तो देखे नहीं जा सकते। उन्हें दिन में छिप जाना चाहिये। रात को जब कि चन्द्रमा पर बादल हों तभी बाहर निकल सकते हैं,"

(To drink from the same cup would be spiritual poison; their very shadow was pollution. Some of them were even 'unseenable' and must hide themselves by day, only coming out when there were clouds over the moon).

अछूत जिन्हें गांधी जी ने हरिजन का नाम दिया था हमारी संस्कृति के सबसे बड़े कलंक हैं। यह भेदभाव मिटाना मानववाद के लिये आवश्यक है। यद्यपि यह कहना आवश्यक होगा कि वर्ण विभेद, श्रम विभाजन की नीति पर अवलंबित था किन्तु युगयुग की इस परम्परा में परिवर्तन लाना हमारी आज की पुकार है इसलिये कि उस परम्परा में आज अनेक कुरीतियों ने घर बना लिया है और समाज के पुर्ननिर्माण तथा हमारी बलिष्ठता के लिए आवश्यक है कि हम इस प्रथा को उखाड़ फेंकें।

वर्ण एवम् जाति भेद के पूर्व ही सतत् विश्व में एक प्राकृतिक भेद है। वह है योनि का। नारी और पुरुष समाज के दो विभिन्न अंग हैं। ग्रामीणों के सामाजिक जीवन में भी नारी को वही स्थान प्राप्त है जो किसी अन्य भारतीय नारी को। शास्त्रकारों ने नारी की अभ्यर्थना की "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता" और उन्हें देवी पद की अधिकारिणी माना। इस्लाम में भी स्वर्ग माता के चरणों में माना गया। सदा से नारी पुरुष की अर्द्धांगिनी रही और समाज में उसे उच्च पद प्राप्त रहा। पर आज यह अपना आसन खो चुकी है। वह बहुत नीचे गिर चुकी है। माता की जाति से केवल भोग्या की वस्तु तक ही सीमित है। गांव में भी उसको अधिकतर सम्मान नहीं प्राप्त है। १९४१ के जनगणना के अनुसार भारत में १८,७९,७२,२२९ औरतें हैं और गांवों में १६,५६,६३,८१३ जैसा आगे की तालिका से स्पष्ट होगा।

नारी और पुरुष का १९४१ में वितरण

पुरुष			नारी		
कुल	नगर	ग्राम	कुल	नगर	ग्राम
२०,१०,२५,७२६	२,७३,८७,६३७	१७,३६,३८,०८९	१८,७९,७२,२२९	२,२३,०८,४१६	१६,५६,६३,८१३

यहां लगभग २२८ पुरुष पीछे २०० नारियां हैं। यदि हम वयस की दृष्टि से उनका वितरण करें तो नीचे की सारिणी पायेंगे।

अवस्था के अनुसार नारी और पुरुष का वितरण

अवस्था (वर्ष में)			(पुरुष प्रति १०,००० में)	(नारी प्रति १०,००० में)
१–४	..	..	१,४७०	१,५८०
५–९	..	..	१,३२०	१,२७०
१०–१४	..	..	१,२००	१,१८०
१५–१९	..	..	८९०	९४०
२०–२४	..	..	९१०	९७०
२५–२९	..	..	८६०	८६५
३०–३४	..	..	७९०	७६०
३५–३९	..	..	६४०	५७५
४०–४४	..	..	५५०	५००
४५–४९	..	..	४२०	३९०
५०–५४	..	..	३३०	३२०
५५–५९	..	..	२३०	२३०
६०–६४	..	..	१८०	१९०
६५ और ऊपर	..	..	२१०	२३०

उपर्युक्त सारिणी द्वारा हम देख सकते हैं कि भारतवर्ष में १ से ४ वर्ष और ६५ के ऊपर की नारी की संख्या पुरुषों की अपेक्षा अधिक है। इस देश में पुरुष और नारी की औसतन् वयस २३.२ और २२.८ वर्ष है।

भारतवर्ष की १८ करोड़ नारी जनसंख्या में लगभग ५ करोड़ अथवा बालिग नारी की आधी जनसंख्या अपने पांवों पर खड़ी है। इनमें से लगभग २½ करोड़ कृषि के कार्यों में हाथ बटाती हैं, अतः यह कहना सरल होगा कि गांवों की लगभग २½ करोड़ स्त्रियां पुरुषों की ही भांति कृषक हैं। १½ करोड़ औरतें लोगों के घरों का काम कर अपनी रोटी कमाती हैं। मिलों में काम करने वाले १ करोड़ ५० लाख मजदूरों का तृतीयांश स्त्रियों का है। गांवों में वे निम्नलिखित कामों में भाग लेती हैं—

१—बोवाई	६—लकड़ी बीनना	११—सामान ढोना
२—गोड़ाई	७—गोबर इत्यादि से कंडे पाथना	१२—मछली मारना
३—चिड़िया उड़ाना	८—चूना गारा उठाना	१३—घरों में चाकरी
४—कटाई	९—गाय भैंस चराना	१४—बांस के सामान बनाना
५—भूसा उड़ाना	१०—पत्थर तोड़ना	१५—घास छीलना

इन कामों के अतिरिक्त गांवों की प्रायः प्रत्येक नारी अपने घर के व्यवसाय में हाथ बटाती है। यदि उसका पति कृषक है तो वह खेती बारी में हिस्सा लेती है। यदि उसका पति कपड़ा बुनता है तो वह तानाबाना ठीक करती है। यदि उसका पति कुम्हार है तो वह बर्तन बेचती है अथवा अन्य कामों में हिस्सा बटाती है। उसका काम केवल घर तक ही नहीं सीमित रहता। अपितु घर के भरण-पोषण के लिये जो रोजगार उसके घरवाले अपनाये रहते हैं, उसमें भी उसका साझा रहता है। कानूनी दृष्टि से उस रोजगार द्वारा प्राप्त द्रव्य पर उसका कोई अधिकार नहीं। गांव की ९९प्रतिशत नारी वर्णमाला के प्रथम अक्षर से भी अपरिचित हैं। वह निपढ़ हैं, मूढ़ भले ही न हों। गांव की कुछ नारियां वेश्या वृत्ति द्वारा भी अपना पोषण करती हैं। इस प्रथा का उन्मूलन समाज के लिये आवश्यक है।

यद्यपि भारत में नारी की अपेक्षा पुरुष अधिक हैं फिर भी यहां द्विविवाह अथवा बहुविवाह का प्रचलन है और विधवा विवाह का निषेध। आज का हिन्दूकोड बिल नारी के अधिकारों की मांग कर रहा है। वह द्विविवाह को अवैधानिक सिद्ध कर इस प्रथा को नष्ट करना चाहता है। द्विविवाह के अधिकार से भारतवर्ष की केवल हिन्दूजाति ही को नहीं वरंच सभी जातियों को वंचित कर देना चाहिए। यूरोप में देखा गया है कि अक्सर लोग दूसरी शादी करने के लिये मुसलमान हो गये हैं। हिन्दुस्तान में भी संभव है कि कोई हिन्दू द्विविवाह के लिये हिन्दू धर्म का परित्याग कर इस्लाम धर्म ग्रहण कर सकता है। हिन्दू कोड बिल की इस धारा को सब धर्मों पर लागू किया जाना चाहिएं अथवा द्विविवाह के दृष्टिकोण से सभी भारतीय को हिन्दू मान लेना चाहिए जिससे इस धारा के अनुसार शासित हो सकें।

जहां तक शिक्षा का प्रश्न है गांवों का अधिकांश वर्णमाला के प्रथम अक्षरों से भी अपरिचित है। भारतवर्ष की लगभग १४ प्रतिशत जनसंख्या शिक्षित कही जा सकती है। १४ प्रतिशत में से लगभग ९ अथवा १० प्रतिशत लोग नगरों में रहते हैं। शिक्षित वर्ग गांव में रहना अपने शान के खिलाफ समझता है। वास्तव में शिक्षा के पश्चात् उनकी जो आवश्यकतायें हो उठती हैं वे गांवों में सुलभ कहां। यद्यपि बहुत दिनों से हमारे नेताओं की यह पुकार रही कि शिक्षित वर्ग गांवों में जाकर काम करें, पर न तो उन्होंने वहां जा कर कुछ किया और न उनके शिष्यों ने, अतः साधारण शिक्षित वर्ग गांवों से दूर ही रहा। गांव के युवक, जिन्होंने नगरों में जाकर शिक्षा ग्रहण की नौकरियों की तलाश में और पुनः उसे पा जाने पर नगरों में ही रह गये। गांव में जो शिक्षित लोग हैं, उनमें से लगभग ९० प्रतिशत सरकारी अथवा अर्ध सर-कारी मुलाजमीन हैं, उदाहरणार्थ कानूनगो, पटवारी, दरोगा, रेल के बाबू, प्राइमरी अथवा मिडिल स्कूल के शिक्षक इत्यादि। इनमें से अधिकांश शासक वर्ग के ही लोग हैं और वे गांव की अशिक्षा दूर करने में अधिक सहायक नहीं हो सकते। गांवों से अविद्या को दूर करने के निमित्त हमारे प्रान्त के शिक्षा मंत्री माननीय बाबू सम्पूर्णानंद के प्रयत्न और योजना वास्तव में प्रशंसनीय एवम् महत्वपूर्ण हैं। यदि उस महान पुरुष के स्वप्न साकार रूप धारण कर सके तो आगामी १० वर्षों में ही हम इस प्रान्त के हर बच्चे को शिक्षा ग्रहण करते देख सकेंगे। प्रारंभिक शिक्षा अनिवार्य और निःशुल्क हो जायगी। केन्द्रीय शिक्षा मंत्री मौलाना अबुल कलाम

आजाद का विचार है कि प्रत्येक शिक्षित नवयुवक को किसी अन्य सर्विस में जाने के पूर्व एक वर्ष तक शिक्षक का कार्य करना चाहिये। यदि यह योजना कार्यान्वित की जाय तो प्रत्येक भारतीय को विद्यावान का अवसर प्राप्त होगा और यहां का बच्चा-बच्चा शिक्षित हो उठेगा।

गांव के अधिकांश लोग आज मुकदमेबाजी के चक्कर में पड़े रहते हैं। उनका बहुत सा पैसा वकील, मुख्तार और अदालतों में नष्ट होता है। प्रिवी काउंसिल तक मुकदमे जाते हैं। उत्तर प्रदेश और मद्रास में गांव पंचायतों द्वारा इस भावना और प्रथा के उन्मूलन का प्रयत्न हो रहा है। पंचायतें भारत की एक आदिकालीन निशानी हैं, जिनका उद्धार कर अथवा जिन्हें पुनः जन्म दे माननीय श्री आत्माराम गोविन्द खेर ने ग्रामोद्धार की कड़ी को पुनः संगठित किया है। राजस्थान में भी पंचायत राज को जन्म देने की योजना तैयार हो गई है। हमारे प्रान्त में १५ अगस्त, १९४९ से इस विभाग ने पूरी तरह से काम करना शुरू कर दिया है।

किसी अंश तक गांवों में अब भी संयुक्त परिवार की प्रथा प्रचलित है, पर धीरे-धीरे हम देख रहे हैं कि इस प्रथा का ह्रास हो रहा है। 'तीन परानी तेरह चूल्हा' की उक्ति आज के भारतीय समाज पर ठीक जंचती है। गांवों में एक घर में ही तीन या चार चूल्हे जलते हैं। हर भाई का भोजन अलग बनता है। फ्रांस के पतन का कारण मार्शल पेतां ने बताया छोटा कुटुम्ब (small family), वास्तव में संयुक्त परिवार राष्ट्र एवम् घर दोनों की दृष्टिकोण से एक बहुत अच्छी प्रथा है।

ग्रामीणों की सामाजिक दशा के वर्णन में पोथी की पोथी रंगी जा सकती है परन्तु स्थानाभाव से हम ऐसा नहीं कर सकते। बाल विवाह, बहुविवाह, वृद्ध विवाह, विधवायें, अशिक्षा, मुकदमेबाजी, सभी कुछ तो व्यापक हैं। गरीबी तो इतनी है कि कहा नहीं जा सकता। ऋण के भार से वे दबे हैं। न उनके पास ठिकाने का घर है, न कपड़े और आबादी बढ़ती जा रही है। बंगाल के ग्रामीणों की दैन्यावस्था का वर्णन करते हुए श्री एच० जी० वेल्स ने एक स्थान पर लिखा है "मनुष्य भक्षी पशु रात को ग्राम में प्रवेश करता है और सोते हुए मनुष्यों को उनके घरों से उठा ले जाता है। ताले, चिटकनियां और छड़ों का मूल्य द्रव्य है किन्तु कृषकों का मूल्य कुछ नहीं"। (Man eating beasts will come into the villages and carry of people in the night from their houses. Locks, bolts and bars cost money and peasants cost nothing).

सामाजिक अवस्था को पूर्णतया चित्रित न करने पर भी राजनैतिक अवस्था का वर्णन करना आवश्यक होगा। स्वतंत्रता के पश्चात् एक नवनीत जागरुकता भारत के गांवों में व्याप रही है। स्वतंत्रता संग्राम में यहां के किसान किसी से पीछे नहीं रहें। आज उन्हें अपने अधिकारों और स्वत्वों का ज्ञान प्राप्त हो रहा है। यद्यपि अभी तक अधिकार और कर्तव्य दोनों से वे पूरी तरह से अपरिचित हैं फिर भी जागरण की एक लहर उनके खून में दौड़ पड़ी है। भारत के संविधान प्रारूप के विधान बन जाने के पश्चात् से जब बालिग मताधिकार (adult franchise) का अधिकार हमें प्राप्त हो गया है उनके जीवन में एक नई स्फूर्ति आजाने की संभावना है। धनबल पर निर्मित समाज के बंटवारे, (जमींदार, किसान, महाजन) और धर्म बल पर कृत जाति के विभाजन दोनों का धीरे धीरे प्रभाव कम हो जावेगा।

अब एक दृष्टि उनकी आर्थिक अवस्था पर भी डालना आवश्यक होगा। भारतवर्ष एक कृषि प्रधान देश है। ७३ प्रतिशत लोग किसान हैं। ग्रामीणों का प्रथम उद्योग कृषि है। वहां पर लगभग सभी किसान हैं। हो सकता है कि उनमें से बहुतों के पास भूमि न हो, पर फिर भी उनकी जीविका का साधन कृषि है। बहुत से अपने आय की वृद्धि के लिये अनेक उद्योगों में लीन हैं, पर कृषि ही उनका आधार उद्योग है। कृषि की महत्ता में भारतीय कवियों ने पोथियों की पोथियां रंग डाली हैं। 'उत्तम खेती, मध्यम बान, निकृष्ट चाकरी, भीख निदान' की उक्ति सर्व प्रसिद्ध है। आज भूमि समस्या ही ग्रामीणों की सब से प्रमुख समस्या है। भूमि के अआर्थिक वितरण से उत्पादन में कमी आ गई है। भूमि पद्धति की बुराई की ओर संकेत करते हुए डा० वोलकर ने १८८९ में कहा था "दूषित भूमिप्रथा

उत्पादन को कमी का एक विशेष कारण है" (A defective land system was one of the causes of low productivity of land.)

१९३६ ई० में आज के प्रधान मंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने भी कहा था "वास्तव में हमें भूमि के प्रश्न का सामना करना है और बेकारी का, जो उससे सम्बन्धित है" (fundamentally we have to face the land problem......and the problem of unemployment which is connected with it) स्पष्ट है कि भारतवर्ष के आर्थिक ढांचे का एकमात्र स्तंभ यहां की भूमि है। १९३१ के जनगणना के अनुसार यदि हमारे प्रान्त की भूमि यहां के जनसंख्या के मध्य समान वितरण हो तो १.४० एकड़ भूमि प्रति मनुष्य को प्राप्त हो सकेगी। १९३१ से १९४१ तक जनसंख्या में १३.७ प्रतिशत की वृद्धि हुई। अब १९४९ में यदि भूमि वितरित हो तो लगभग १ एकड़ जमीन हर आदमी को मिल सकेगी। इंडियन फार्मिंग (Indian Farming) के विशेषांक डेवलपिंग विलेज इंडिया (Developing Village India) में अपने निबंध प्राबलम आफ ऐग्रीकल्चर एन्ड न्युट्रिसन (Problem of Agriculture and Nutrition) में श्री फीरोज खरेंघाट ने भारत की औसत जोत को ०.८५ एकड़ मापा है।

भारतीय ग्रामीणजनों का प्रचुर अंश कृषि पर ही निर्भर रहता है। निम्नांकित सारिणी द्वारा १९३१ के जनगणनानुसार हम उत्तर प्रदेश के उन लोगों का जो खेती ही पर निर्भरित हैं, वितरण कर सकते हैं *:—

कृषि शीर्षक	कमाने वालों अथवा काम करने वाले निर्भरितों की संख्या	समस्त कृषकों में प्रति १००० में अंशदान		
		१९३१	१९२१	१९११
कुल कृषि शीर्षक ..	१,७७,६५,४३१	१०००	१०००	१०००
खेत न जोतने वाले जमींदार ..	२,६०,६१०	१५	१८	९
खत न जोतने वाले काश्तकार ..	१,९३,८७७	११		११
जमींदार का एजेंट सरकारी रेन्ट कलेक्टर, जिलेदार इत्यादि ..	५२,४६३	३	३	५
भूमि जोतने वाले जमींदार ..	१७,९५,५३६	१०१	८४४	७९
न भूमि जोतने वाले काश्तकार ..	१,२०,११,६२१	६७६		७२३
मजदूर कृषक ..	३४,१९,१८५	१९२	१३४	१७१
विशेष प्रकार के खेतिहर (माली इत्यादि) ..	३२,१३९	२	१	२

उपर्युक्त सारिणी से स्पष्ट है कि मजदूर कृषकों की संख्या १९३१ में १९२१ की अपेक्षा कहीं अधिक बढ़ी। ये बेचारे उन अभागों में से हैं, जिनके पास अपनी एक चप्पा भर भी भूमि नहीं, न ये किसी भूमि पति के असामी ही हैं। ये दूसरे के खेतों में काम करते हैं और मजदूरी पते हैं इनकी मजदूरी का भुगतान प्रायः द्रव्यरूप में न होकर वस्तु रूप में होता है। युद्धकालीन महंगी और तंगी से तंग आकर इनका एक प्रचुर अंश युद्धोद्योग में भाग लेने के

*Report of the U.P. Zamindari Abolition Committee-Volume 1-page 6.

लिये गांव छोड़ कर नगर अथवा उद्योगों की ओर भागा और मजदूर-कृषक के बदले मिल का मजदूर बन गया। उनमें से अधिकांश अब भी उद्योगों में ही हैं।

इस तरह से हम ग्रामीणों को मुख्यतः चार भागों में बांट सकते हैं। १—जमींदार जो असामियों अथवा मजदूरों द्वारा खेती कराता है। २—किसान, जो स्वयं खेती करता है। ३—मजदूर कृषक, जिनके पास अपनी कोई भूमि नहीं पर पेशा कृषि ही है ४—अन्य उद्योगों में लीन लोग जो साथ ही साथ किसानी भी करते हैं।

अब हमें देखना यह है कि क्या गांव में उन किसानों के पास भी जो स्वयं खेती करते हैं इतनी भूमि है कि वे अपने अथवा अपने परिवार का पालन-पोषण कर सकें। इसके लिये आवश्यक होगा कि हम पहले यह समझ लें कि एक भारतीय परिवार-पोषण के लिये कितनी एकड़ भूमि की आवश्यकता होगी। कीटिंग ने अपनी पुस्तक रूरल इकानमी इन दी डेकन (Rural Economy in the Deccan) में एक दक्षिणी परिवार के पोषण योग्य भूमि का क्षेत्रफल ४० अथवा ५० एकड़ मापा है। भूमि के अतिरिक्त उसके खेतों के पास ही एक कुआं भी होना चाहिये जिससे उनकी सिंचाई हो सके। डा० हेरल्ड मैन ने दक्षिणी ग्राम में परिवार-पोषण योग्य भूमि (Economic holding) २० एकड़ बताई है। डा० लूकास ने जाटों के लिये १४ एकड़ भूमि कम बताई और श्री डालिंग के अनुसार प्रत्येक पंजाबी कृषक परिवार के पास १० एकड़ भूमि से अधिक भूमि होना चाहिये अन्यथा वह अपने घर और परिवार का खर्च नहीं संभाल सकता। हमारे प्रान्त के लिये श्री केर ने १९०३ में २३ एकड़ भूमि को पर्याप्त बताया था। डा० स्टैनली जेवन्स ने यहां के कृषक परिवार के लिये कम से कम २०-३० एकड़ भूमि बतलाई। उत्तर प्रदेश की कांग्रेस एग्रेरियन कमेटी ने १९३६ में लिखा "हमारा विश्वास है कि आज कल के सस्ती के दिनों में एक परिवार के पोषण योग्य भूमि १५ से २० एकड़ होना चाहिये। यदि भाव उचित रूप से ऊंचा हो, लगान अधिक न हो, सिंचाई के साधन सुगम हों, अच्छी खेती और बिक्री का प्रबन्ध हो, तब हम समझते हैं कि उत्तर प्रदेश के परिवार-पोषण योग्य भूमि की माप घटाई जा सकती है" (We believe that in the present state of low prices, an economic holding should be between 15 to 20 acres. If prices are reasonably high and rents not excessive and there are better facilities for irrigation, improved cultivation and marketing, we think that an economic holding in U. P. can be reduced to a lower figure .

माल विभाग के सभासचिव, श्री चरण सिंह के अनुसार उत्तर प्रदेश के प्रत्यक कृषक परिवार के पास एक इकाई में अपने भरण-पोषण के लिये कम से कम ६$\frac{1}{4}$ एकड़ भूमि होनी चाहिये। हमारा विभाग प्रान्त की परिवार-पोषण योग्य भूमि (economic holding) जानने के लिये प्रान्त के विविध जिलों के विविध ग्रामों से जीवन निर्वाह की लागत और (Cost of living) कृषि उत्पादन के व्यय (cost of cultivation) के आंकड़े एकत्रित कर रहा है। आशा है शीघ्र उन आंकड़ों के एकत्रित हो जाने के पश्चात हम इस प्रान्त की परिवार पोषण योग्य भूमि (economic holding) बता सकेंगे। अभी तो श्री चरण सिंह का ६$\frac{1}{4}$ एकड़ ही ठीक समझ लेना चाहिये। यदि हम इस इकाई को भी पर्याप्त मान लें तो इस प्रान्त के ८५.४ प्रतिशत कृषकों के पास, जिनकी संख्या लगभग १,०४,८५,४११ होगी परिवार के भरण-पोषण लायक भूमि नहीं है। ३७.८ प्रतिशत अथवा ४६,३९,३३१ कृषकों की जोत १ एकड़ से भी कम है।

अब भारत के भूमि उपयोग पर भी एक दृष्टि डालना आवश्यक होगा। नीचे की सारिणी प्रो० राधा कमल मुकर्जी की पुस्तिका दि फूड सप्लाई (The food Supply) से उद्धृत की जा रही है।

भारतवर्ष में भूमोपयोग

प्रान्त	वृद्धि-जन संख्या का गुणांक	बोई हुई भूमि का क्षेत्रफल दस लाख एकड़	एकबार से अधिक बोया गया भू-भाग	ऊसर तथा बंजर दस लाख एक	प्रति १०० एकड़ फसल में पशु की संख्या	बन (वर्गमील) उपयोगी	अनुपयोगी	भूमि में बन का अंश
बंगाल	२.१	२४.७	४.९	५.७	१०२	८,९७२	३,४६६	१६
बिहार	१.५८	१९.३	४.४	५.१	८३	८,८०२	७४७	१३.८
उड़ीसा		६.४	०.५	३.५		१,५११	२,१५९	११.२
उत्तर प्रदेश	१.३५	३६	८.६	९.९	९०	५,४१२	११,९६०	१६.३
मद्रास	१.३५	३२	४.८	१०.५	७३	१६५७३	१६६९४	२३.२
आसाम	..	६.२	०.७	१८.८	..	..	२१,३०७	३१.६
मध्य प्रान्त तथा बरार	०.६३	२४.५	२.७	१३.९	५१	३३,५२१	१४,०२२	४७.५
पंजाब	०.८९	२७.२	४.२	४.१	५८	१,८७२	४,१२०	४.१
बम्बई	०.६२	२८.७	०.९	०.८	३५	७,८४०	५,३०६	१०.६
सिंध	..	५.१	०.५	५.८	५१	१,१५४	..	२.४

यह मान कर कि भारतवर्ष के एक औसत परिवार जिसमें ४.२ व्यक्ति निवास करते हैं ५ एकड़ भूमि जीवननिर्वाह के लिये आवश्यक होगी, बृद्ध जनसंख्या का गुणाक निकाला गया है। इस तरह कृषि उद्योग में लगे प्रति व्यक्ति के लिये १ एकड़ भूमि अनिवार्य है। औसतन प्रति व्यक्ति द्वारा बोई गई भूमि को एक एकड़ से विभाजित करने पर हम उस प्रान्त के बृद्ध जनसंख्या का गुणक पाते हैं। श्रम और पूंजी प्रधान खेती (Intensive Farming) कालम ३ में दिखाई गई है। यदि हम मिश्र का जहां की परिस्थिति भारत के बहुत से प्रदेशों जैसी है माप दंड लें तो भारत में प्रति १०० एकड़ बोई गई भूमि की आवश्यकता और यातायात के लिये २५ पशुओं की आवश्यकता होगी। प्रति १०० एकड़ फसल में २५ से अधिक पशुओं की संख्या को अ आर्थिक एवम् अनावश्यक समझना चाहिये। कृषि की आवश्यकताओं के लिये साधारणतः २० प्रतिशत भूमि में वन प्रदेश होना चाहिये। उपयोगी और अनुपयोगी वन क्षेत्रफल को श्री एस० यच० हावर्ड ने आंका है।

उपर्युक्त सारिणी से बहुत सी बातें स्पष्ट हैं। पहली तो यह कि ४.२ व्यक्ति के परिवार के भरण के दृष्टिकोण से किसानों के पास ५ एकड़ से भी कम भूमि है और दूसरे जनसंख्या में खाद्य दृष्टि से यथेष्ट वृद्धि हो गई है। तीसरी बात यह है कि प्रायः सभी प्रान्त में पशुओं की संख्या आवश्यकता से अधिक है। चौथे केवल मध्य प्रदेश और बरार तथा आसाम को छोड़कर अन्य प्रान्तों में बनों के अन्तर्गत भू-भाग आवश्यकता से कम है।

जंगलों की कमी आज भूमि अथवा ग्राम की समस्या बनती जा रही है। यह स्पष्ट करना और भी आवश्यक होगा कि भूमि के कटाव तथा वर्षा के लिये वनों की बहुत आवश्यकता होती है। वनों से ग्रामीणों की आय वृद्धि की जा सकती है। वन उत्पादन उदाहरणार्थ लाख, पल्प, रोजिन, कत्था इत्यादि द्वारा ग्रामीण जनसंख्या के एक अंश को दूसरे उद्योग में लगाया जा सकता है और कृषि में लगी हुई जनसंख्या के भार को भी एक सहायक उद्योग द्वारा हरा जा सकता है। पर आज हमारी आय प्रति एकड़ वन भू-भाग से बहुत कम है। जब जर्मनी प्रति एकड़ वन से १४ रुपया वार्षिक कमाता था तो भारत केवल ५ आना। ग्रामीणों के लाभ के लिये वन प्रदेश तथा वनोद्योग दोनों का उत्थान नितांत आवश्यक है।

आज गांवों का एक भू-भाग ऊसर अथवा बंजर के रूप में पड़ा है। १९३७-३८ई०के प्राप्य आंकड़ों से ज्ञात होता है कि १००·५ करोड़ एकड़ के भारतीय क्षेत्रफल में केवल २८·१ करोड़ एकड़ भूमि फसल के काम आई। लगभग ११ करोड़ एकड़ भूमि ऊसर और बंजर के रूप में प्रदर्शित की गई है। इसके अतिरिक्त ५.८ करोड़ एकड़ पर्ती पड़ी हुई भूमि है। बढ़ती हुई जनसंख्या और खाद्य समस्या के अवसर पर न हम ऊसर ही छोड़ सकते हैं और न पर्ती ही। इलाहाबाद विश्वविद्यालय के रसायन विभाग के अध्यक्ष डा० यन० आर० धर के अनुसार इन ऊसरों को शीरा की खाद द्वारा उर्वर प्रदेश बनाया जा सकता है। चीनी उद्योग भारत का एक प्रमुख उद्योग है। यहां शीरे अथवा चोटे की कमी नहीं। १९४६-४७ ई० में भारत में शीरे का उत्पादन ३,२७,१०० टन था। आज कल इस शीरे का उचित उपयोग नहीं होता है। खाद ग्रामीणों की एक समस्या है और वह गोबर जैसी सर्वश्रेष्ठ खाद को जलाकर खाक कर देते हैं। आवश्यकता दो बात की है। पहली यह कि वह गोबर का उचित प्रयोग करें। उसे जलाकर नष्ट न करें। और दूसरे ऊसर अथवा बंजर प्रदेश को उर्वर बनाने के लिये उनमें शीरे अथवा अन्य उपयोगी खाद का प्रयोग करे। खाद समस्या को हल करने में केन्द्रीय सरकार पूर्ण रूप से प्रयत्नशील है। बिहार (सिमरी) में खाद उत्पादन के लिये सरकार एशिया का सब से बड़ा कारखाना खोल रही है। योजना कार्यान्वित हो चुकी है और आशा है कि १९५१ तक वह कारखाना पूरी तरह से चलने लगेगा।

किसान की आर्थिक अवस्था खेतों और उनके फसल पर निर्भर है। फसल अथवा उत्पादन अच्छे बीज, अच्छी जोताई, बोआई, अच्छी खाद और अच्छी सिंचाई पर निर्भर है।

जोताई बोआई के दृष्टिकोण से हमारे किसान आज भी १८ वीं शताब्दी में रह रहे हैं। आज भी वे ८ इंच के फाल वाले हल से खेत जोतते हैं। अच्छी जोताई से उत्पादन बढ़ता है। आज के रूस और अमरीका तथा अन्य देश मशीनों का व्यवहार कर एक एकड़ भूमि से भारत की अपेक्षा प्रायः हर वस्तु कई गुना पैदा कर रहे हैं।

बहुधा सभी किसान जमींदार अथवा बड़े कृषक से फसल बोने के पूर्व बीज उधार लेते हैं। फसल के पश्चात् लिये हुए परिमाण का सवाई अथवा ड्योढ़ा उन्हें वापस करना पड़ता है। बीजों की भी दशा न स्वस्थ होती है, न बहुत अच्छी ही, इस तरह से न कृषकों को अच्छा बीज ही मिलता और न अच्छी फसल ही तैयार होती है। दूसरे फसल तैयार होने पर उन्हें बीज का सवाई, डेढ़ और बहुत से स्थानों में ढाई गुना दे देना पड़ता है। आज कल सरकार ने उन्नतिशील बीज बांटने के लिए बीजगोदाम खोले हैं, परन्तु यह गोदाम कुल बीज का एक अंश ही दे सकते हैं। सिंचाई का उचित प्रबन्ध नहीं है। हमारे किसान वर्षा की माया पर पलने वालों में से हैं। वर्षा की अनिश्चितता से उनकी फसल भी अनिश्चित रहती है। सिंचाई के उचित प्रबन्ध के लिये नहरें, तालाब, कुएं इत्यादि का प्रयोग किया जाता है। १९४१-४२ में भारत की ५.६ करोड़ भूमि जिसमें कि कृत्रिम उपायों द्वारा जल वितरित किया गया, को हम निम्नांकित सारिणी द्वारा बांट सकते हैं।*

---

*National Planning Committee Report—Land Policy and Agriculture, Pages 26—27.

जल सिंचित क्षेत्र
(दस लाख एकड़ में)

नहर द्वारा	तालाब द्वारा	कुंयें द्वारा	अन्य उपायों द्वारा	कुल जल सिंचित क्षेत्र
२,९९,३२,३६०	५८,०८,१२७	१,४१,८२,७५९	६८,२७,१६०	५,६७,५०,४०६

इस तरह हम देखते हैं कि जब बोई हुई जमीन ३० करोड़ एकड़ के लगभग है तो सिंचाई का उचित प्रबन्ध केवल ६ करोड़ एकड़ भूमि में ही है। नहर, कुएं, तालाब, कृषि के आधार हैं। हमारे विकास मंत्री माननीय केशव देव मालवीय का इस ओर किया गया प्रयत्न प्रशंसनीय है। उन्होंने स्वयं जाकर कितने तालाबों का जीर्णोद्धार किया और कितने तालाब तथा कुएं नये खुदवाये।

भारत के भिन्न भिन्न प्रदेश में तो भूमि स्वत्व (land tenure) अथवा हक़ आराजी भिन्न भिन्न भांति की है। १९३५–३६ के जमीन पैमाइश के हिसाब से बृटिश भारत में कुल ६६,७५,२४,००० एकड़ में ३३,४९,४४,००० एकड़ भूमि में रैयतवारी और शेष में जमींदारी प्रथा थी। जमींदारी प्रथा में बन्दोबस्त इस्तमरारी के अन्तर्गत १२,१५,७७,००० एकड़ और चन्दरोजा बन्दोबस्त के अन्तर्गत १९,८३,६०,००० एकड़ भूमि थी। इन अंकों में बर्मा और पाकिस्तान भी सम्मिलित हैं। जमींदारी प्रथा किसानों के ऊपर एक भार है। सरकार और उनके मध्य के लोग रईस बने घूमते हैं, जब कि उत्पादक किसान और राज दोनों दीन ही बने रहते हैं। इस प्रथा की बुराई करने की कोई आवश्यकता नहीं है। भारत में यह प्रथा न हिन्दू राजाओं के युग में थी और न मुसलमान शासकों के काल में। अंगरेजों ने इस प्रथा को जन्म दिया और उनके जाने के साथ-साथ इस प्रथा का उन्मूलन भी आवश्यक है। जमींदारी प्रथा की अंगरेज सरकार द्वारा नियुक्त लिनलियगो, साइमन, फ्लाउड, उडहेड प्रायः सभी कमीशनों ने शिकायत की है। सभी प्रान्तों की सरकारें, जहां पर जमींदारी प्रथा है, इसके उन्मूलन का निश्चय कर चुकी हैं। हमारे प्रान्त में भी गवर्नर महोदय ने इस प्रथा के उन्मूलन के निमित्त १५ आदमियों (United Provinces Zamindari Abolition (Commitee) की एक समिति नियुक्त की थी। प्रान्त के प्रधान मन्त्री माननीय श्री गोविन्द वल्लभ पन्त उस समिति के आसनाधीश थे। समिति की रिपोर्ट दो भागों में प्रकाशित हो गई है। रिपोर्ट सेलेक्ट कमेटी के पास विचारार्थ पहुंच चुकी है। आशा है असेम्बली के आगामी अधिवेशन में यह रिपोर्ट जो लगभग विधेयक (Bill) का रूप ले चुकी है विधान (Act) बन जायगी और इस प्रान्त में भूमि का राष्ट्रीयकरण हो जायगा।

ग्रामीणों के भूमि की सबसे बड़ी समस्या है। उनके खेतों का खंड खंड और दूर दूर वितरित होना। छोटे छोटे दूर दूर के खेत (fragmentation of holding) पर रायल कमीशन आन एग्रीकल्चर (Royal Commission on Agriculture) लिखता है "पिपला सौदागर में डा० मान ने ६२% कृषकों के खेत एक एकड़ से कम पाये, और जतगांव में यह अनुपात ३१ % था। बैरमपुर में श्री भल्ला ने ३४.६ प्रतिशत में २५ खंडों से भी अधिक पाया.........पंजाब के एक गांव में एक व्यक्ति के पास २०० से अधिक स्थानों पर भूमि थी। उसी गांव में ६ व्यक्तियों में हर एक के पास सौ-सौ टुकड़े थे।" (In Pipla Saudagar Dr. Mann found that 62% of the cultivators' plots were below one acre and in Jategaon the percentage was 31. In Bairampur Mr. Bhalla found that 34.6 per cent had over 25 frag-

ments each.....In a village in the Punjab, an owner was found with his land at 200 different places whilst in the same village there were 6 owners with 100 plots each)

१९९१ के सेन्सेस रिपोर्ट पर आधारित १५ अगस्त, १९४७ के पूर्व हम भारत के नीचे लिख प्रान्तों में औसतन निम्नांकित जोत के खेत (Holding) पाते हैं।

प्रान्त		एकड़
बम्बई ..	..	१२.२
पंजाब ..	..	९.२
मध्य प्रान्त	..	८.५
बर्मा ..	..	५.६
मद्रास ..	..	४.९
बिहार और उड़ीसा	..	३.१
आसाम ..	..	३.०
उत्तर प्रदेश ..	..	३.५

ये टुकड़े भी खंड खंड में बंटे दूर दूर स्थित हैं और किसान और उसका परिवार अपने खेतों के जोतने, बोने, सींचने, काटने में कई गुना अधिक समय लेता है। दूसरी बात छोटे छोटे टुकड़ों में पैदावार भी कम होती है और खर्च भी अधिक बैठता है। अपने प्रान्त के इन छोटे छोटे टुकड़ों का उदाहरण जमींदारी अबालीशन कमेटी रिपोर्ट के पन्ना १७ से उद्धृत किया जा रहा है, "फील्डस इन अवध" (Fields in Oudh) ने हरदोई जिले के अन्तर्गत मल्हेरा नामक ग्राम की पैमाइश करने पर पाया कि ९ बीघा २ बिस्वा भूमि ११ टुकड़ों में बंटी है। ३३ बीघा १४ बिस्वा की एक दूसरी जोत २५ भागों में बंटी है। इसी भांति नौनापुर ग्राम में १८ एकड़ भूमि '०२ और '०३ एकड़ के सात खंडों में बंटी हुई है। आज के जोत के तो और भी टुकड़े हो गये हैं, इन टुकड़ों का मुख्य कारण है भूमि स्वत्व अथवा हक़ आराजी की प्रथा। २० पुश्तों में जमीन २० बार बंटी और २० एकड़ भूमि के टुकड़े होते होते '०२ एकड़ रह गये।

खेतों की चकबन्दी आवश्यक है। जमींदारी प्रथा के उन्मूलन के साथ यदि सरकार यह आवश्यक कर दे कि प्रति किसान के पास कम से कम आर्थिक जोत की भूमि होगी और वह एक टुकड़े में होगी तो बहुत अच्छा हो। इसके उपरान्त विधान द्वारा यदि यह भी अनिवार्य कर दिया जाय कि ४ या ५ अथवा ६ किसान जिनकी भूमि पास-पास है, मिलकर एक में खेती करें तो और भी अच्छा होगा। बड़े बड़े टुकड़ों को मशीन और ट्रैक्टर द्वारा जोत-बो कर हम खेतों से अधिक अन्न भी उपजा सकते हैं और उत्पादन के मूल्य में भी कमी कर सकते हैं। एक बात स्पष्ट करना अधिक आवश्यक होगा। इन टुकड़ों की माप अधिक न बढ़ना चाहिये। इस विषय में नीचे विविध देशों में हुई पैमाइश के आंकड़े दिये जा रहे हैं* :—

डेनमार्क

१९१७-२३ में लार्सन द्वारा की गई पैमाइश का परिणाम—

खेत की नाप प्रति एकड़		प्रति एकड़ उत्पादन का कुल मूल्य	
		पौंड	शिलिंग
२५ एकड़ से कम	..	२०	६
२५-५०	..	१५	४
५०-७५	..	१५	३
७५-१००	..	१३	१८
१००-२५०	..	१२	८
२५० से अधिक	..	१२	४

*Zamindari Abolition Committee Report, Vol. 1 minute of dissent by Shri Z. H. Lari, pp, 594-595.

संयुक्त राज्य अमेरिका

१९२२ में हुई एक आर्थिक जांच का परिणाम—

		पाउन्ड
४० एकड़		५४
८० एकड़		४८

स्वीटजर लैंड

खेत का माप एकड़		प्रति एकड़ उत्पादन का कुल पौंड	शिलिंग	मूल्य पेन्स
७ १/२ से १२ १/२	..	२२	११	७
१२ १/२ से २५	..	१९	०	३
२५ से ३७ १/२	..	१७	१७	२
३७ १/२ से ७५	..	१६	२	३
७५ से अधिक	..	१३	१७	७

ग्रेट ब्रिटेन

१ से ५०	..	११	१९	९
५० से १००	..	९	१९	२
१०० से १५०	..	७	१९	१
१५० से २५०	..	७	१५	८

रूस एक ऐसा देश है जहां के आंकड़े प्राप्य नहीं, पर वहां मीलों लम्बे चौड़े खेत हैं और वहां पर भी अब लोग इस निष्कर्ष पर पहुंच रहे हैं कि इतने बड़े-बड़े खेतों से अधिक लाभ नहीं। न बहुत बड़े खेत होने चाहिये न छोटे । ३० एकड़ की चकबन्दी ठीक भूमि होगी। इस चकबन्दी में काम करने वाले सभी मजदूर वही होने चाहिये जिनकी जमीन उसमें सम्मिलित है।

अब गांव वालों के भोजन और भूमि के उत्पादन की ओर दृष्टि डालना आवश्यक होगा। प्रोफेसर राधा कमल मुकरजी* के अनुसार प्रत्येक भारतीय को प्रतिदिन २८०० केलोरीज भोजन में प्राप्त होनें चाहिये। इस औसत में वे २०० केलोरीज भी शामिल हैं, जो रसोई तथा चौके इत्यादि में नष्ट हो जायगी। इस तरह से १९३५ की जनसंख्या के लिये ३२१·५ बिलियन केलोरीज की आवश्यकता है। उस वर्ष भारत की कुल खाद्य सामग्री २८०.४ बिलियन केलोरीज के बराबर थी। इस तरह हमारे देश में ४१.१ बिलियन केलोरीज का अभाव था। अर्थात् १९३५ में ४ करोड़ २० लाख अथवा १० प्रतिशत भारतीयों के लिये भोजन नहीं प्राप्त था। आज के आंकड़े और भी उठ गये हैं। श्री जहीरुल हसन लारी† के अनुसार उत्तर प्रदेश के एक कृषक परिवार को जिसमें वह, उसकी पत्नी, एक १२ वर्ष का लड़का और १ उससे छोटी लड़की सम्मिलित है, प्रति दिन बड़ों के लिये ८ छटांक और बच्चों के लिये ४ छटांक अन्न की दर से वर्ष में १५ मन ३८ सेर १२ छटांक गल्ला चाहिये। इतना स्पष्ट है कि अधिकांश भारतीय अथवा उत्तर प्रदेशीय कृषक का परिवार इस परिवार से बड़ा है। हम उसकी जोत (Holding) देख चुके हैं। अब हमें भारतवर्ष की प्रति एकड़ भूमि का उत्पादन देखना है। उत्तर प्रदेशीय सरकार के अर्थ परामर्शदाता तथा संख्या अधिकारी, श्री जुगुल किशोर पांडेय के अनुसार भारतवर्ष का प्रति एकड़ उत्पादन निम्नलिखित है:—

* Food Planning for 400 Millions pp. 25-26

† Zamindari Abolition Committee Report, Volume I, pp. 590

खाद्यान्न		प्रति एकड़ उत्पादन (पाउन्ड में)
चावल	..	८००
गेहूं	..	५९०
ज्वार	..	६००
बाजरा	..	५००
जौ	..	९००
चना	..	८००

श्री पांडेय के ही अनुसार वास्तविक उत्पादन इन अंकों से १० प्रतिशत कम है। डाइरेक्टोरेट आफ़ इकनामिक्स तथा स्टैटिसटिक्स, मिनिस्ट्री आफ़ एग्रीकल्चर, गवर्नमेंट आफ् इंडिया ने प्रति एकड़ उत्पादन के निम्नलिखित आंकड़े दिये हैं*:—

खाद्यान्न		प्रति एकड़ उत्पादन
गेहूं	..	५८०
चावल	..	७१७
ज्वार	..	३५७
बाजरा		३१४
जौ	..	७०३
चना	..	४८३

एक दृष्टि विदेशों के उत्पादन पर भी डालना अनुचित न होगा।

देश			प्रति एकड़ उत्पादन पौंड में— चावल	गेहूं
चीन	..	..	२,४३३	९८९
जापान	..	..	३,०७०	१,३५०
संयुक्त राज्य अमरीका	..	..	१,६८०	९९०
विश्व उत्पादन	..	..	१,४४०	८४०

उपर्युक्त सारिणियों से हम पाते हैं कि भारतवर्ष का प्रति एकड़ उत्पादन बहुत कम है। संसार के प्रायः समस्त उन्नतशील देशों का प्रति एकड़ उत्पादन भारत से कहीं अधिक ह। यहां तक कि विश्वोत्पादन के औसत से भी भारत का औसत कम है । यह कहना कि सदियों से हमारे खेत जोते बोये जा रहे हैं, अतः उत्पादन में कमी अवश्यंभावी है एक महान सत्य की हत्या होगी। सर टी० विजय राघवाचार्य ने अपने पुस्तिका 'दि लैंड एन्ड इट्स प्राबलम (The Land and its Problem)' में इस तर्क का खंडन करते हुए तंजौर के उन खेतों का दृष्टान्त दिया है, जिसमें हजारों वर्ष पूर्व से धान की खेती होती है, पर आज भी उनके उत्पादन में कोई कमी नहीं आई है और वे उतने ही उर्वर हैं, जितने कि पहले थे।

अपनी खाद्यस्थिति को संभालने के लिये और भोजन के लिये विदेशों का मुंह न ताकने के निमित्त आज के गांव वालों का प्रमुख कर्त्तव्य है कि वे प्रति एकड़ उत्पादन में वृद्धि करें । भारत के प्रधान मंत्री श्री नेहरू का विचार है कि १९५१ ई० से हम इतना अन्न उत्पादित करने लगें कि विदेशों से आयात बन्द कर दें। आशा है सरकार और जनता दोनों इस बात के लिये प्रयत्नशील होंगी ।

* Estimate of Area and Yield of Principal Crops in India—April, 1948.

इन सब के उपरान्त अन्न की सब से बड़ी समस्या है उनका उचित वितरण। आज के बाजारों में इतने मध्यवर्गी हो गये हैं कि बेचारा किसान अपने उत्पादन का उचित मूल्य ही नहीं पा सकता। बाजार, यातायात इत्यादि की समस्या का वर्णन आप अगले अध्याय में पायेंगे।

एक दृष्टि ग्रामीणों के ऋण की ओर डालना भी आवश्यक होगा। यहां के किसानों के लिये लिखा है "वे ऋण में जन्म लेते हैं, वे ऋण में जीवन व्यतीत करते हैं और वे ऋण में ही मरते हैं (They are born in debt, they live in debt, and they die in debt)" भारतीय कृषकों को इन कर्जों से बचाने के लिये भिन्न भिन्न प्रान्तीय सरकारों ने भिन्न २ विधानों द्वारा प्रयत्न किया है। गत महा युद्ध से, जब से कृषि के उत्पादन का मूल्य बढ़ गया है, किसानों ने काफी पैसा लौटा भी दिया है; पर अभी वे ऋण के भार से उन्मुक्त नहीं हो पाये हैं। आवश्यक है कि उन्हें ऋण के इस भार से पूर्णतया मुक्त करने का प्रयत्न किया जाये और सरकार की ओर से उत्पादन के कार्यों में सहायता पहुंचाई जाये। यह कर्ज अधिकतर किसानों को अपने खेतों के विविध आवश्यकताओं के निमित्त लेना पड़ा है। सन् १९३७ में रिजर्व बैंक आफ इंडिया के कृषि-ऋण-विभाग ने इस कर्ज का भार १८०० करोड़ रुपया कूता था।

गांव की आर्थिक दशा का वर्णन बगैर वहां के कुटीर-उद्योगों के वर्णन के अधूरा रहेगा। भारतीय ग्रामों के कुटीर उद्योग वहां की जन-संख्या के आधार हैं। भूमि के पश्चात् इन्हीं के द्वारा बहुतों का भरण-पोषण होता है। भारतवर्ष के ये उद्योग सुन्दरतम् वस्तुओं के उत्पादन में अपना सानी नहीं रखते। काश्मीर के शाल, बनारस की साड़ियां, मिर्जापुर के क़ालीन सभी कुटीर उद्योग के ही उत्पादन हैं। राष्ट्र की उन्नति के लिये इन उद्योगों की उन्नति नितांत आवश्यक है। आगे के पन्नों में इन उद्योगों का चित्र खींचा गया है। ग्राम्यावस्था का उपसंहार करते हुये हम यही कह सकते हैं कि ग्राम जो भारत की वास्तविक सम्पत्ति है और ग्रामीण जो यहां के वास्तविक निवासी हैं, संसार के प्रायः सभी देशों से पिछड़े हुए हैं। उनकी जीविका का साधन अउपलब्ध है। जब कैनाडा में प्रति मनुष्य पीछे कृषि पर २० रु० १२ आना और संयुक्त राज अमरीका में ७७ रु० ८ आना प्रति वर्ष खर्च होता है, तो भारत में केवल ११ आना। उनके पास न तो पर्याप्त भोजन है न यथेष्ट वस्त्र और न रहने के लिये शरणदायक घर। उनकी शिक्षा और स्वास्थ्य का यथेष्ट प्रबन्ध नहीं है और न कोई विशेष मनोरंजन के ही साधन हैं। यह है हमारे ग्राम्यावस्था की संक्षिप्त समीक्षा।

उन्नत ग्राम

हिन्दुस्तान के गांव सदा से एक सोई हुई दुनिया में छोड़ दिये गये हैं। वे तितर-बितर बसे हुये हैं। यातायात का साधन दुर्लभ है और सब से बढ़कर पहली सरकार की नीति उन्हें उन्नति न करने देती रही है। ग्रामोन्नति की ओर दृष्टि डालने का श्रेय दो व्यक्तियों को है—प्रथम श्री एफ० एल० ब्रेन और दूसरे महात्मा गांधी। ग्राम उन्नायकों के सूची पत्र में इन दो महापुरुषों का नाम सदा शीर्ष पर रहेगा। श्री ब्रेन, आई० सी० एस० प्रथम व्यक्ति थे जिन्हों ने भारतीय जनता और उससे भी पहले पंजाब और भारत सरकार का ध्यान गांवों की उन्नति की ओर केन्द्रित किया। पूज्य बापू ने गांवों को ही अपना निवास स्थान बनाया और उनका प्रायः हर कार्य गांवों में रह कर गांव की उन्नति के निमित्त हुआ। उनके नाम पर आश्रम खोले गये और उन आश्रमों में गांव में बने हुए सामान बेचने के लिये रक्खे गये। आज भी भारत के प्रायः प्रत्येक बड़े नगर में स्थित गांधी आश्रम इस बात का साक्षी है। गांव की उन्नति के लिये आज हिन्दुस्तान के प्रत्येक प्रान्त की सरकार तन-मन-धन से प्रयत्न कर रही है और आशा ही नहीं विश्वास भी है कि हम शीघ्र ही भारतीय ग्रामों की उन्नति के चरम शिखर तक पहुंचने में समर्थ हो सकेंगे।

ग्रामोन्नति के कार्यक्रम को हम निम्नलिखित तेरह भागों में विभाजित कर सकते हैं:—

१—संगठन।

२—प्रचार

३—कृषि और भोजन।

४—बाजार।

५—यातायात।

६—कुटीर उद्योग।

७—विद्युत प्रसार तथा सिंचाई।

८—पशु-पालन।

९—औद्योगिक उन्नति।

१०—सहकारिता।

११—स्वास्थ्य और सफाई।

१२—शिक्षा और व्यायाम।

१३—मनोरंजन।

संगठन—आज के भारतीय ग्राम की दशा १९१७ ई० के पूर्व के रूसी ग्राम की भांति है। जार के रूस में गांवों और वहां के रहने वाले उतने ही पीछे थे जितने कि भारत के गांव और वहां के रहने वाले आज हैं। १९१७ ई० में रूसने करवट बदली और ३० वर्ष पश्चात् १९४७ ई० में हिन्दुस्तान ने अंगड़ाई ली है। रूस एक कृषि प्रधान गांवों का देश है। भारत भी वैसा ही है। आज के रूसी गांव संसार के प्रायः सभी देशों के गांवों से उन्नति के दौड़ में बाजी मार ले गये हैं। उन्हें आर्थिक स्वतंत्रता ही नहीं अपितु राजनीतिक स्वत्व भी प्राप्त हैं। वहां का प्रत्येक ग्राम अपने प्रति अपने आप को उत्तरदायी है। गांव के सभी झगड़े, गांव की सभी जरूरतें, गांव के सभी मसले गांव की सेलोसोवियत (Selosoviet) तय कर लेती है। आपस के संगठन द्वारा उन गांवों ने रूस को संसार का एक महान् समृद्धिशाली राष्ट्र बना दिया है। भारत भी आज अपने गांव का संगठन कर रहा है।

संगच्छध्वं संवदध्वं सं नो मनांसि जानताम्,
देव भागम् यथा पूर्व संजनाना उपासते।

अर्थात् 'संग-संग चलो, संग बोलो, तुम्हारे मन एक हों, तुम सब भाग गांव की एकता का ज्ञान, ध्यान में रखते हुए बराबर-बराबर करो, जैसा कि देवता पहले से निश्चय करते आये हैं' का चल चित्र आज भारत की आंखों में फिर रहा है।' पंचायत राज और ग्राम पंचायतों का पुनः जन्म हो रहा है। ग्राम पंचायतें केवल सामाजिक जीवन ही में एक इन्कलाब न लायेंगी, अपितु देश के आर्थिक और आत्मिक दोनों क्षेत्रों में एक परिवर्तन खड़ा करेंगी।

प्रचार—प्रचार एक महान कला है। प्रजातन्त्रवाद की उन्नति के लिये इस कला की उन्नति नितांत आवश्यक है। इसी कला द्वारा हमें भारतीय मूढ़ और अशिक्षित ग्रामीण, जो धर्म और जाति के पीछे यहां तक नहीं समझता कि राष्ट्र और देश क्या वस्तु है, को विनाश से बचाने का प्रयत्न करना चाहिये। प्रचार द्वारा उनकी शिक्षा का मार्ग भी अधिक स्पष्ट हो उठता है। प्रचार की अभ्यर्थना करते हुए श्री ब्रेन कहते हैं—"प्रचार एक कलात्मक विषय है। ग्रामीणों के लिये सन्देश देना एक वस्तु है, उस संदेश को प्रतिपादित करना बिल्कुल दूसरी बात है और इस वस्तु कला का विशेष अध्ययन करना पड़ता है। इसलिये उन सब व्यक्तियों को, जो ग्रामीणों को नये उपायों द्वारा शिक्षित करना चाहते हैं और नई बातों का प्रसार करना चाहते हैं, विशेषरूप से प्रचार-कार्य की कला को सीखना चाहिए" (Publicity is a technical subject It is one thing to have message for the village. To deliver tha. message effectively is quite another thing and the technique has to bet specially learned. All, therefore, who are trying to teach the villagers new ways and popularise new things should receive definite training in Publicity methods and technique.*)

अपनी इन पंक्तियों में श्री ब्रेन ने केवल प्रचार ही नहीं अपितु प्रचारक की महत्ता और आवश्यकता तथा शिक्षा का वर्णन कर दिया है, अतः उस पर अधिक लिखना अनावश्यक सा है। अब प्रचार के उपाय और भिन्न-भिन्न प्रकार के प्रचार का अवलोकन आवश्यक होगा।

त्योहार और मेले—भारतवर्ष त्योहारों और मेलों का देश है। हिन्दू धर्म में तो त्यौहारों का अन्त नहीं। होली, दीपावली, विजय दशमी इत्यादि न जाने कितने बड़े बड़े त्यौहार और उनके उपरान्त कितने छोटे-छोटे त्यौहार होते हैं। मुसलमानों में भी ईद, बकरीद, शबेरात, मुहर्रम इत्यादि तथा ईसाईयों में बड़ा दिन, ईस्टर, सिखों में गुरु जन्म दिवस इत्यादि त्यौहार होते हैं। त्यौहारों के उपरान्त अनेक मेले भारत के संगठन-प्रेम के द्योतक हैं। कुछ मेले, जैसे सोनपुर, प्रयाग का कुंभ अथवा अर्द्ध कुम्भ, कलकत्ता का दुर्गापूजा, पुरी की रथ-यात्रा विश्व-ख्याति रखते हैं। इन मेलों के उपरान्त गांव में प्रायः मेले हुआ ही करते हैं। हर बड़े गांव में सप्ताह में एक या दो बार बाजार लगती है। त्यौहारों के अवसर पर विशेष रूप से मेलों का आयोजन होता है। ये त्यौहार मेले और बाजार प्रचार के लिये बहुत उपयुक्त हैं। इनमें हम ग्रामीणों को सुधारकों द्वारा व्याख्यान सुनवा सकते हैं। उन्हें रजत पट पर सुधार और प्रचार के चित्र दिखाए जा सकते हैं। इश्तिहार, पुस्तिका आदि बांटे जा सकते हैं।

प्रदर्शन, प्रदर्शिनी और विशेष सप्ताह—गांव में प्रचार के लिये ये तीन बहुत लाभप्रद हो सकते हैं। प्रदर्शन तीन प्रकार से हो सकता है—पहला वक्ताओं द्वारा, दूसरा नृत्य और गीत सम्मेलन का आयोजन कर और तीसरा सिनेमा द्वारा। वक्ता और भाषण दोनों प्रचार के बहुत बड़े साधन हैं, पर दोनों के लिये योग्य पुरुष और उचित शिक्षा की आवश्यकता है। नृत्य और गीत का सम्मेलन कर हम उन्हें अपनी बात वहां बता सकते हैं। प्रायः देखा गया है कि आल्हे की ढोल के एक आवाज पर झुण्ड के झुण्ड

---

* Developing Villages in India.

गांव-जन मंडरा उठते हैं। इन आयोजनों से उनके बौद्धिक विकास में भी पूरी सहायता दी जा सकती है। तीसरा रजत पट। आज के प्रचार-क्षेत्र में इसकी महिमा बहुत बढ़ गई है। जर्मनी के संगठन और उच्च सैनिक शिक्षा का प्रमुख कारण रजत पट रहा है। भारत में भी अनेक डाकुमेन्ट्री फिल्म्स बनी हैं। इनकी संख्या अब २०० से अधिक होगी। इनमें से दो तो बहुत महत्वपूर्ण हैं—पहला जिनमें भारत के भिन्न-भिन्न नृत्य और वाद्य के प्रदर्शन का संग्रह हुआ है और दूसरा मिनू मसानी की पुस्तक "हमारा हिन्दुस्तान" के आधार पर बनता हुआ चित्र, जो अभी प्रदर्शित नहीं हुआ है। हमारी सरकार इन चित्रों के गांवों में प्रदर्शन की ओर उचित दृष्टि डाल रही है। गांव गांव में मोटरें जो रजत पट पर ग्रामीणों को अच्छी खेती, साफ घर, मलेरिया विजय, कुम्भ मेला, बदलता हुआ भारत, शुद्ध दुग्ध इत्यादि चित्र दिखा कर उनका मनोरंजन करती हैं और शिक्षा भी देती है।

दूसरे हम प्रदर्शिनियों द्वारा ग्राम उद्योग में निर्मित पदार्थों का प्रचार कर सकते हैं। इन प्रदर्शिनयों में ग्रामोफोन पर बजते हुये रेकार्ड द्वारा हम उनमें देश प्रेम, राष्ट्रप्रियता और स्वार्थ त्याग की भावना भर सकते हैं।

तीसरे हम विशेष सप्ताहों का आयोजन कर उनमें प्रचार कर सकते हैं। १५ अगस्त के अवसर पर "स्वातंत्र्य सप्ताह," बापू के जन्म दिन १ अक्तूबर के अवसर पर "खादी सप्ताह", मृत्यु पर "बापू सप्ताह" इत्यादि विशेष सप्ताहों का आयोजन कर कुछ निर्माणकारी काम कर सकते हैं।

इन प्रचारों में प्रेस और रेडियो अपना निजी महत्व रखते हैं। उनके बिना तो आज का प्रचार रोता ही रहेगा। गांव-गांव में रेडियो आज हमारा नारा है, जिसे कल हम घर-घर में बदल सकते हैं। अखबार पढ़ाना और जो ग्रामीण न पढ़ सकता हो उसे पढ़कर सुनाना गांव में काम करते हुए सरकारी कर्मचारियों का मुख्य कार्य होना चाहिए।

कृषि और भोजन—दूसरे अध्याय में इन विषयों पर काफी लिखा जा चुका है। यहां यह बात बता देना आवश्यक होगा कि भारत विश्व में गन्ने द्वारा चीनी उत्पादक देशों में सर्व प्रथम है। चावल के उत्पादन में यह और चीन दोनों संसार के सब से अधिक उत्पादकों में से हैं। संयुक्त राज अमरीका के पश्चात् संसार में सब से अधिक रूई भारत में ही पैदा होती है। मूंगफली के उत्पादन में यह सब से आगे है। और अलसी अर्जेन्टाइना के पश्चात् सब से अधिक यहीं उपलब्ध है। जूट और लाख के उत्पादन में भारत को एकाधिकार प्राप्त है। बाजरे के उत्पादन में संसार के प्रथम तीन देश—अफ्रीका और चीन के साथ-साथ इसका भी नाम है। चीन के पश्चात् भारत में ही चाय की सब से ज्यादा पैदावार है।

इतना सब होने पर भी आज हम पर खाद्य संकट के काले मेघ छाये हुए हैं। ८० प्रतिशत जनता की दशा शोचनीय है। अन्न की कमी को हम भोजन में मांस, मछली, दूध और उसके उत्पादन अंडे, चीनी, फल और तरकारी द्वारा पूरी कर सकते हैं। इन वस्तुओं के उपयोग द्वारा अन्नाभाव को दूर कर सकते हैं। भविष्य के लिये निम्नांकित सारिणी द्वारा श्री फ़िरोज खरे घाट भोजन और उसके उपलब्ध का वितरण करते हैं।

प्राप्य और इच्छित उपभोग की वस्तुयें

	प्रत्येक बालिग को प्रति दिन (आउंस में) अथवा उपभोग की इकाई		दस लाख टनों में कुल वजन	
	बॅलेंस डायट के लिये आवश्यक	प्राप्य	आवश्यक	प्राप्य
खाद्यान्न	१६	१८.५	४८.०	५५.५
दाल	३	२.५	९.०	७.५
चीनी	२	१.८	६.०	५.३
तरकारी	६	३.०	१८.०	९.०
फल	२	२.०	६.०	६.०
तेल और अन्य फैट्स	१.५	०.६	४.५	१.९
शुद्ध दूध	८	१.५	३२.०	६.३
		प्रति व्यक्ति		
मक्खन दूध	..	३.०	..	१२.५
मांस, मछली और अंडे	२ से ३	०.५	६.० से ९.०	१.५

उपर्युक्त सारिणी से स्पष्ट होता है कि यदि हम अन्य वस्तुओं का उपयोग कर सकें तो खाद्य संकट कुछ हद तक टल सकता है। फिर भी कृषि की उन्नति की ओर हमारा ध्यान सब से पहले जाना चाहिये। उसके लिये जैसा कि पूर्वाध्याय में वर्णित है, भस्वत्व के नियम में परिवर्तन, पंचायत संगठन, चकबन्दी, मिली जुली खेती (Mixed farming) कृषि का यन्त्रीकरण, मिट्टी की रक्षा, अच्छे बीज, अच्छी खाद, पाले और कीड़ों से फसल की रक्षा का प्रबन्ध , उचित और समयानुकूल सिंचाई तथा बाजारों की सुव्यवस्था होनी चाहिये। जहां तक सरकारी कर के दर का प्रश्न है 'टैक्सेशन इन्क्वायरी कमेटी' ने कुल उत्पादन के चौथाई को कर रूप में लेने की सिफारिश की है। यद्यपि यह दर इटली और फ्रांस के १० प्रतिशत और हंगरी के १२ प्रतिशत की दर से ऊंची है, पर किसी हद तक ठीक भी है। हां, कर की दर इससे अधिक न बढ़ना चाहिये। दूसरे भोजन तथा उसके पोषक मूल्य को हमें चावलों पर पालिस करा, गेहूं का चोकर छान, अधिक देर तक चूल्हे पर उबाल, तरकारी के छिलके फेंक, चावल का मांड़ बहा, चूहों को खिला, थाली में छोड़, रसोई में गिरा नष्ट न करना चाहिये।

बाजार--ग्रामोन्नति के लिये बाजारों की उन्नति नितान्त आवश्यक है। प्रायः हर बड़े-बड़े ग्राम में सप्ताह में एक या दो दिन बाजार लगती है। इन बाजारों में गांव के जीवन की कुछ आवश्यकतायें उपलब्ध होती हैं। पर ये ऐसे बाजार हैं, जहां ग्रामीण किसान अपने परिश्रम का मूल्य नहीं पा सकते। उन्हें अपने उत्पादनों को कस्बों और मंडियों में लेजा कर बेचना पड़ता है। सबसे बड़ी चीज तो यह है कि हमारे किसान फक्कड़ होते हैं। खेत में फसल है और वे उसे बेचने की तैयारी कर देते हैं। कहीं-कहीं आलू इत्यादि तो जब खेत ही में रहते हैं तभी उनका सौदा हो जाता है। फसल कटते ही उसे रुपये के लिये फसल बेचने की जरूरत पड़ जाती है। उसके पास न तो इतना धैर्य है कि वह अपनी फसल को काट कर रख सके और तब बेचे जब उसे अच्छा भाव प्राप्त हो और न स्थान ही है कि वह अपने गल्ले को थोड़े दिनों भी अपने घर में सुरक्षित रख सकें। इसलिये उसे शीघ्र ही अपना उत्पादन बेचना पड़ता है। उसके मेहनत की पूरी कमाई उसके घर तक भी नहीं पहुंच पाती। शीघ्र ही वह मंडी पहुंच जाता है। गांव ही से अढ़तिए के दलाल उस के साथ हो जाते हैं। पहले कच्चा अढ़तिया फिर पक्का अढ़तिया और उनके पूर्व दलाल और तीनों के पश्चात् अन्य व्यापारी और तब उपभोक्ता। इतने मध्यवर्तियों के कारण किसान को विशेष लाभ नहीं हो पाता। इन मंडियों में उसके रुकने का प्रबन्ध नहीं रहता। जिस दिन वह पहुंचता है उसी दिन उसे अपना सामान बेच वापस आना रहता है। उस के और उसके बैल और गाड़ी के लिये स्थान न रहने के कारण उसे किसी भी दर पर अपने गल्ले को बेच देना पड़ता है। ये अढ़तिये और महाजन किसान के पैसों में से धर्म खाता और न जाने कौन-कौन सी रकम काट लेते हैं। धर्मखाते के उस पैसों से उस किसान अथवा उसके परिवार के किसी भी व्यक्ति का लाभ नहीं होता। सेठ जी दानी हैं किसान के पैसे से, उनके नाम से धर्मशाला, गौशाला, पाठशाला खुल जाते हैं।

यातायात--"यातायात सामान तथा मनुष्यों के हेतु समयसेतु की रचना करता है" (Transport bridges time for matter and persons)। किंतु भारत तो आज भी मोटर नहीं बैलगाड़ी का देश है। गांवों में केवल बैलगाड़ियां ही उपलब्ध हैं। यातायात के उचित प्रबन्ध न होने से ग्रामीणों को अपनी उपज का उपयुक्त मूल्य नहीं मिलता है। अधिकांश गांव रेलों से बहुत दूर हैं। संयुक्त भारत में कुल ७,२०० रेलवे स्टेशन थे। खंडित भारत में लगभग ६,०००। इस में से लगभग २,५०० स्टेशन तो नगरों में हैं अर्थात् लगभग ६ लाख गांवों में रेलवे स्टेशन की संख्या ३,५०० के समीपतर है। अर्थात् प्रत्येक १०२ गांव पीछे लगभग १ अथवा यदि नगर के स्टेशनों को समीप के गांवों का भी मान लें तो १०० गांव पीछे १ रेलवे स्टेशन हैं। १९४८ ई० में कुल ३४,५६५ मील रेलवे लाइनें थीं। अर्थात भारत में प्रति एक लाख मनुष्य पीछे कुल १० मील रेलवे लाइन है। बहुत से गांव तो रेलवे स्टेशन से कई दिन के फासले पर स्थित हैं। लार्ड वेवेल ने कहा था वह दिन निकट है जब प्रत्येक भारतीय ग्राम रेलवे स्टेशन से १० मील से अधिक दूरी पर न होगा। हमें भी आशा है कि वह दिन शीघ्र आएगा और वर्ड बैंक द्वारा मिले कर्ज से हम अपनी रेलों का समुचित विकास कर सकेंगे।

जहां तक सड़क का प्रश्न है जर्मी बेन्थम ने कहा था—"सड़कें देश की वे छोटी तथा बड़ी रगें हैं, जिनके द्वारा प्रत्येक उन्नति का मार्ग प्रवाहित होता है।" भारत में प्रति लाख मनुष्य पीछे २०० मील लम्बी सड़क है जब कि आस्ट्रेलिया में हर लाख पीछे ९,००० मील। प्रति वर्गमील में भारत में '०२ और जापान में ३ मील लम्बी सड़क है। प्रति चालीस मनुष्य पीछे यहां एक बैलगाड़ी और प्रति १,४०० मनुष्य पीछे एक मोटर गाड़ी है। सड़कों की दशा अवर्णनीय है। अधिकांश फेयर वेदर रोड्स हैं। बहुत से गांवों को केवल पगडंडियां ही किसी कच्ची सड़क से मिलाती हैं। भारत के अधिकांश ग्राम वर्षा के दिनों में यातायात के साधनों से दूर हो जाते हैं। उन तक पहुंचना भी दुर्लभ है। सड़क के मामले में हमारी पहली नीति होनी चाहिए कि इन 'फेयर वेदर रोड्स' को 'आल वेदर

रोड्स' में परिवर्तित कर दें, तथा उन सड़कों की रक्षा करें जो अभी हमारे पास हैं। फिर हमें प्रत्येक ग्राम तक एक सड़क ले जानी है अर्थात् हर गांव को मुख्य सड़क से मिला देना है। बैलगाड़ियों में रबर का उपयोग नहीं होता और लोहे के हालों से सड़कें शीघ्र नष्ट हो जाती हैं। यदि हम मोटर का उपयोग नहीं कर सकते तो कम से कम बैलगाड़ियों में हमें रबर के टायरों का प्रयोग तो करना ही चाहिये। इससे यातायात में भी सुविधा होगी और सड़कों की रक्षा भी।

थल यातायात की उन्नति के साथ ही हमें जल यातायात को भी उन्नति प्रदान करना है। सामान ले जाने के लिये तो इस प्रथा से सुविधाजनक और सस्ती कोई प्रथा नहीं। बंगाल में आज यह किसी हद तक जीवित है अन्यथा अन्य प्रांतों में तो नदियों के होते हुए भी इसका अभाव रहा है। गांवों की एक बहुत बड़ी समस्या हम इस यातायात को सुलभता से दूर कर सकते हैं।

अन्त में आज के व्योम यातायात की उन्नति भी आवश्यक है। प्रतिशत ·०१ग्रामीण ने भी हवाई जहाज की सैर न की होगी। शायद निकट से देखा भी न हो। आज भी गांव वालों के लिये वह तमाशा है। संसार के राष्ट्रों में शक्ति बल में किसी से न पीछे रहने के लिये हमें आवश्यक है कि हम इस यातायात की उन्नति करें और भारत के प्रति १०० गांवों के मध्य एक हवाई अड्डा बना दें।

कुटीर उद्योग—कुटीर उद्योग और उसके उत्पादनों के लिये भारत विश्व ख्याति प्राप्त कर चुका है। हम वे दिन भूले नहीं हैं जब कि रोम, फ्रांस और लंदन के बाजारों में भारत के कुटीर उद्योग की उपज मूल्यवान समझी जाती थी और उनका उपयोग करने वाले उनके उपयोग में शान समझते थे। मुर्शिदाबाद की साड़ियों के स्कर्ट और ढाका के मलमल का पहनना यूरोपियन नारियां गौरव की बात समझती थीं। आज के युग में भी इस देश में कुटीर उद्योग एक प्रमुख उद्योग है। उद्योगों में लगे १ करोड़ ६० लाख व्यक्तियों में से १ करोड़ ३० लाख व्यक्ति कुटीर उद्योग द्वारा जीविकोपार्जन करते हैं। डा० जान मथाई ने लखनऊ यूनिवर्सिटी पार्लियामेंट के समक्ष भाषण देते हुए कहा था कि आज हम बड़े उद्योगों को नहीं खोल सकते। कुटीर उद्योग ही भारत के आर्थिक ढांचे को स्थिर रख सकते हैं। कुटीर उद्योग की महत्ता में इन्डियन इन्डस्ट्रियल कमीशन (Indian Industrial Commission) ने १९१८ई० में लिखा "कुटीर उद्योग भारत वर्ष के औद्योगिक जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है"(Cottage Industries are a very important feature of the industrial life of India).

गांव की एक अच्छी खासी जन-संख्या अपना जीविकोपार्जन इसी उद्योग द्वारा करती है। इस उद्योग के आंकड़े अभी प्राप्त नहीं, पर शीघ्र ही केन्द्रीय सरकार के आदेश पर प्रांतीय सरकारें इन आंकड़ों को एकत्रित करने की व्यवस्था कर रही हैं। भारतवर्ष जनसंख्या और कृषि उत्पादन के दृष्टिकोण से बहुत घना बसा है, अतः अतिरिक्त जन-संख्या को इस उद्योग की ओर ध्यान देना चाहिये।

डा० जे० सी० कुमारप्पा* ने इस उद्योग को तीन खंडों में बांटा है—

(१) ग्राम उद्योग—ये उद्योग गांव में उपलब्ध विविध साधनों द्वारा गांव की आवश्यकता के लिये सामान बनाते हैं। उदाहरणार्थ तेल पेरना, कपड़ा बुनना, बढ़ईगीरी, इत्यादि।

(२) कुटीर उद्योग—ये ऐसे उद्योग हैं जिनमें काम करने वाला सदा लगा रहता है और कारखाना घर ही पर होता है। उदाहरणार्थ सुनारी, दर्जीगिरी, मोची का काम, इत्यादि।

(३) गृह उद्योग—अथवा घरेलू उद्योग-धंधे, जिन्हें किसी परिवार के सदस्य अवकाश के समय में अपनाये हुए हों। उदाहरणार्थ सूत कातना, फल एकत्रित करना, कारचोबी का काम, शहद की मक्खी पालना इत्यादि।

---

*Rural India—October, 1947.

श्री एस० के० कालापुर† ने कुटीर उद्योगों को पांच भागों में बांटा है—

(१) वे उद्योग—जो कृषकों द्वारा अवकाश के समय में किये जाते हैं, जैसे दूध-घी का रोजगार, भेड़ें, मुर्गियां, शहद की मक्खी, रेशम के कीड़े पालना, कातना, बुनना, ढोलची आदि बनाना, चटाई बनाना, गुड़ बनाना, इत्यादि।

(२) वे उद्योग—जो गांव द्वारा उपार्जित कच्चे माल का व्यवहार कर गांव के उपभोग के लिये सामान तैयार करते हैं, जैसे तेल पेरना, चमड़ा कमाना, कुम्हारी (मिट्टी का बर्तन बनाना) खपड़े और ईंट पाथना, बेंत और बांस के सामान बनाना, बढ़ईगीरी, रस्सी बंटना, इत्यादि।

(३) वे उद्योग—जिनका कच्चा माल बाहर से आता है पर उपभोग गांव में ही होता है· यथा लोहारी, ठठेरी, इत्यादि।

(४) कलामय वस्तुओं का उत्पादन, जैसे हाथी दांत का काम, मूर्ति बनाना, फर्नीचर बनाना, इत्यादि।

(५) विलास की वस्तुओं के उत्पादक कुटीर उद्योग जैसे बीड़ी और सिगरेट बनाना। इन पांचों में से पहले तीन तो अधिकतर गांवों तक ही सीमित हैं।

कुटीर उद्योग में प्रथम स्थान हाथों के करघों का है। इस उद्योग में लीन मनुष्यों की संख्या लगभग १ करोड़ है और देश में लगभग २५ लाख हाथ के करघे हैं। रूई के सूत से काम करने वाले कारखाने मुख्यतः उत्तर प्रदेश, मद्रास और बंगाल में हैं। ऊन के कुटीर उद्योग काश्मीर, उत्तर प्रदेश और पंजाब में स्थित हैं। रेशम के कारखाने मैसूर, उत्तर प्रदेश, काश्मीर और मद्रास में हैं। काश्मीर का शाल, अल्मोड़ा के धुस्से और लोई, बनारस की साड़ियां, मथुरा और बंगलोर की साड़ियां तथा रेशमी कपड़े, भागलपुर और सूरत का सिल्क, गोरखपुर और मऊ की गजी, इत्यादि का प्रयोग हमारे जीवन में बाहुल्य प्राप्त करता जा रहा है। कुटीर उद्योग द्वारा निर्मित पलंग की चादरें, मेजपोश इत्यादि मिलों के बने सामान से अधिक सुन्दर और मजबूत पड़ता है। कुटीर उद्योग के ह्रास के निमित्त पहले काफी प्रयत्न किया गया था, पर वे हिन्द के आर्थिक ढांचे में ऐसे जम गये हैं कि उनको दूर करना मुश्किल हो गया। उनके बच जाने का प्रमुख कारण था उनकी परिस्थितियां। वे किसानों के आय के साधन थे। गांवों में यातायात सुलभ न था। कुछ लोग उसके उत्पादन की कद्र करते थे। लोगों में देश भक्ति की भावना भर दी गई थी जिस से वे उसका उपयोग करते थे और मिल उतनी शीघ्रता से न खुल सकी जितने की आवश्यकता थी।

आज तो हमें जापान और स्वीजरलैन्ड का अनुकरण करना है। जापान में केवल कपड़ा और लोहा, दो उद्योग छोड़ कर शेष सभी वस्तुयें कुटीर उद्योग के उत्पादन हैं। स्वीजरलैन्ड की विश्व प्रसिद्ध घड़ियों का उद्योग कुटीरों में ही सीमित है। इन देशों को देख कर यह कहना कि कुटीर उद्योग द्वारा हम समृद्धिशाली नहीं हो सकते भ्रममूलक होगा।

श्री एम० विश्वेश्वरियां ने प्रत्येक भारतीय की उद्योगों द्वारा प्राप्त आय १५ रु० कूती है। संयुक्त राज्य इगलैन्ड में यह ७०० रु० और संयुक्त राज्य अमरीका में १,१०० रु० है। आवश्यक है कि हम अपनी इस आय में वृद्धि करें।

इसके लिये अच्छा होगा कि कई गांवों को एक में मिला कर एक कुटीर उद्योग संस्था की स्थापना हो, जो वहां के उपलब्ध सामान और अन्य आवश्यक माल को बाहर से मंगा कर सामान तैयार करे। तैयार माल को स्वयं खरीद ले और उसके वितरण का उचित प्रबन्ध करे। सरकारी सहायता आवश्यक है और उस सहायता का एक अंश उत्तर प्रदेशीय सरकार ने कुटीर उद्योग के लिये ऋण देकर पूरा किया है। इस उद्योग द्वारा बने सामानों के वितरण का

---

† Rural India—January 1947.

भी सरकार उचित प्रबन्ध कर रही है। लखनऊ नगर में दो सरकारी दुकानों में इन सामानों को बेचा जाता है पर आवश्यकता इस बात की है कि हर बड़ी जगह पर एसी दुकानें हों और वहां कुटीर उद्योग से बने हुए माल उचित मूल्य पर मिलें।

विद्युत प्रसार तथा सिंचाई—आज के युग को यदि हम कल (मशीन) युग के बजाय विद्युत युग कहें तो अतिशयोक्ति न होगी। संसार के सभी देशों में विज्ञान के उन्नति की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। विज्ञान के उन्नति की प्रथम सीढ़ी है बिजली। बिजली का अधिक से अधिक उत्पादन ही आज सभी राष्ट्रों का ध्येय है। लेनिन ने रूस की भावी उन्नति के लिये राष्ट्र को एक गुरुमंत्र दिया था। वह था सोवियट विद्युत + शक्ति = कम्युनिज्म।

भारतवर्ष में श्वेत कोयले की कमी नहीं। हमारी अनेक नदियां ऐसी हैं, जिन पर बांध बांध कर हम बिजली और सिंचाई के लिये पानी, दोनों पा सकते हैं। केन्द्रीय सरकार जल विद्युत के प्रसार के लिये आकुल है। देश में लगभग ६० बांध बनाने की योजना तैयार की जा चुकी है। कुछ योजनायें कार्यान्वित भी हो उठी ह।

कुछ मुख्य योजनायें निम्नांकित हैं:—

बांध का नाम	आनुमानिक व्यय (करोड़ में)	सींची जाने वाली भूमि (एकड़ में)	उत्पन्न होने वाली विद्युत (किलोवाट में)
दामोदर घाटी	५५	७,६०,०००	३,५०,०००
मोर बांध	७.२	६,००,०००	४,०००
कोसी बांध	१००	३०,००,०००	१८,००,०००
महानदी बांध	४७.२	२५,००,०००	५,००,०००
नर्मदा बांध	..	३७,००,०००	१०,००,०००
ताप्ती बांध	..	७,००,०००	४८,०००
चंबल बांध	..	२,००,०००	२,००,०००
भास्कर बांध	७५	४५,००,०००	१६,००,०००
रामाम्पद सागर बांध	१२५	१६,००,०००	७५,०००
तुंग भद्रा	१०	३,००,०००	७०,०००
गोंदी कोटा	३०	१,००,०००	..

उत्तर प्रदेश में भी विद्युत प्रसार के लिये कई योजनायें बनी हैं। उनमें रिहंद बांध और बिजली उत्पादक केन्द्र सर्व प्रमुख मिर्जापुर जिले में स्थित दुद्धी तहसील से ३२ मील दूर रिहंद नदी पर यह बांध बन रहा है। उसके अतिरिक्त यमुना जल विद्युत, पठारी जल विद्युत, बेतवा विद्युत, सिंघपुरा बांध, गोरखपुर जल विद्युत, नायर नदी विद्युत, घाघरा विद्युत, राम गंगा विद्युत, कोठरी बांध और पिंडार जल विद्युत अनक योजनायें प्रांतीय सरकार बना चुकी हैं।

उपर्युक्त तालिकाओं से स्पष्ट है कि इन विद्युत योजनाओं के कार्यान्वित हो उठने पर देश का प्रत्येक ग्राम धनधान्य पूर्ण हो उठेगा। वह अंधकार विहीन होगा। जीवन की अनेक सुविधायें उसे प्राप्य होंगी। उसे वर्षा का भय न होगा।

अभी तो जब स्वीटजरलैन्ड अपने जल विद्युत शक्ति का ६७ प्रतिशत, जर्मनी ५४ प्रतिशत, नारवे ५३ प्रतिशत, फ्रांस ४२ प्रतिशत, रूस ३४ प्रतिशत, कनाडा ३४ प्रतिशत, स्वीडन २७ प्रतिशत, संयुक्त राष्ट्र अमरीका २४ प्रतिशत उपयोग कर रहा है तो भारत अपनी शक्ति का एक प्रतिशत अंश भी नहीं काम में ला रहा है। इस समय हमारी विद्युत–उत्पादन–शक्ति ५ लाख किलोवाट है जो हमारी जल शक्ति का २½ प्रतिशत है। प्रति मनुष्य के हिसाब से जब कनाडा ३५,१० ईकाई और नारवें में ३०२० इकाई बिजली का प्रयोग होता है तो हमारे प्रान्त में केवल ६·४ इकाई। कुल बिजली का आधा केवल कलकत्ता और बम्बई नगर में ही खर्च हो जाता है। शेष आधे में सारें भारत का खर्च चलता है अर्थात् १ प्रतिशत जन–संख्या, ५० प्रतिशत बिजली और ९९ प्रतिशत शेष ५० प्रतिशत का उपयोग करती है। इस देश में प्राय: एक हजार ग्राम पीछे तीन गांवों में बिजली है अर्थात् ०.०२३ प्रतिशत ग्रामीण बिजली से लाभ उठा रहे हैं। आशा है शीघ्र ही भारत सरकार भी अमरीका सरकार की भांति एक ग्राम विद्युत् प्रसार विभाग की स्थापना करेगी और यहां भी संयुक्त राष्ट्र के टी० वी० ए० की भांति अनेक योजनायें कार्यान्वित हो उठेंगी।

पशु पालन—भारतवर्ष में लगभग ३५ करोड़ ५० लाख पशु हैं, इन में मुख्य गाय, भैंस और बैल हैं जिनकी संख्या विश्व के ६९ करोड़ में से २१ करोड़ ५० लाख है। प्रति १०० एकड़ फसल की पशु संख्या के लिये पृष्ठ १३ की तालिका देखिए। भारतीय किसानों और ग्रामीणों के आय के वे मुख्य साधन हैं। पशुओं द्वारा वर्ष में लगभग १०२१ करोड़ रुपये का लाभ होता है:

वस्तु पदार्थ			मूल्य करोड़ रुपये में
दूध और उससे बने सामान	..	..	३००.००
पशु श्रम ..	..	..	४००.००
खाद और कंडे के लिये गोबर	..	..	२७०.००
चमड़ा खाल, ऊन, बाल, इत्यादि	..	..	४०.००
मांस, चर्बी, खून, सींघ	..	..	१०.७०
हड्डी, तांत इत्यादि	..	..	०.२५
पशु निर्यात	..	..	०.०५
			१०२१.००

भारत में प्राय: ८० करोड़ मन दूध का उत्पादन होता है। ग्रेट ब्रिटेन में लगभग २० करोड़ मन दूध होता है पर वहां का औसत उपयोग भारत का पांचगुना है। औसतन् यहां की प्रत्येक गाय साल में ५२५ पौंड और भैंस १२७० पौंड दूध देती है। यहां की गाय के दूध में ५ प्रतिशत और भैंस के दूध में ८ प्रतिशत अंश मक्खन होता है जब कि इंगलिस्तान की गाय के दूध में केवल ३.८ प्रतिशत।

मनुष्य की जनसंख्या के वृद्धि की भांति पशुओं की संख्या भी बढ़ती जा रही है। सब से बड़ी समस्या उनके भोजन की है। उनके निर्वाह के लिये हमें वर्ष में ३८१० लाख टन हरा चारा, २२७५ लाख टन सूखा चारा और ७७५ लाख टन खली इत्यादि चाहिये। भारत में आज लगभग १६९१ लाख टन हरा चारा, १३५२ लाख टन सूखा चारा और ७५ लाख टन खली, इत्यादि उपलब्ध हैं। इतना कहना अनिवार्य है कि पशु हमारे धन हैं। वही यहां के कृषि उद्योग के आधार हैं। माना कि उनकी संख्या में वृद्धि होती जा रही है पर या तो हम बढ़ी हुई संख्या का नाश कर दें अथवा उनके भोजन का उपयुक्त प्रबन्ध करें। चरागाह आज खेत बनते जा रहे हैं। आवश्यक है कि हम हरा चारा खेत में बो कर उगायें। खली इत्यादि के लिये यदि हम अपने तेलहन विदेश न भेज कर यहीं पेराएं तो उनकी खली से हमारें पशुओं के भोजन और खेतों की खाद समस्या दोनों हल हो जाती हैं। प्रोफेसर जे० सी० कुमारप्पा ने कूता है कि यदि हम मिट्टी का तेल जो विदेशों से आता है छोड़ कर सरसों, रेंडी अथवा अलसी का तेल जलाना प्रारंभ करें तो भारतवर्ष को साल में १० करोड़ रुपये का लाभ होगा। इस तरह से कुटीर उद्योग को भी उन्नति प्रदान करेंगे और साथ ही साथ हमारे जानवरों के भोजन तथा खेतों की खाद की भी समस्या हल हो जायगी।

सब से बड़ी बात यह है कि हमारे पशु भारतीय मनुष्यों की ही भांति दुर्बल और निर्बल हैं। इसका कारण मुख्यतः भोजन का अभाव है। एक और बात है। हमें अच्छी नस्ल के बैल और गायें चाहिए। इसके लिये हम किसी भी भांति विदेशी बैलों द्वारा क्रास ब्रीडिंग का अनुमोदन नहीं कर सकते पर भारत में प्रायः अच्छे नस्ल के बैलों और भैंसों का उचित वितरण और उनका उचित ध्यान आवश्यक समझते हैं।

गाय, बैल, बकरी तथा भेड़, जिनसे हम ८० करोड़ मन दूध, ६२ करोड़ मन मांस, १,३०,००० टन चमड़ा और खाल और ८ करोड़ ५० लाख पौंड ऊन पाते हैं, के उपरान्त भारत में लगभग १९ करोड़ १० लाख चिड़ियायें हैं जिनमें मुर्गी और बतख सर्व प्रधान हैं। यहां उनका विश्व का दस प्रतिशत अंश है, जिसका मूल्य लगभग ८ करोड़ रुपये कूता गया है। लगभग ५ करोड़ ८० लाख अंडे देने वाली चिड़ियों से हमें वर्ष में ३३६ करोड़ ५० लाख अंडे उपलब्ध होते हैं। इसमें से लगभग २८० लाख अंडे पड़ोस के देशों को निर्यात कर दिये जाते हैं। लगभग ४ करोड़ व्यक्तियों का यह सहायक उद्योग है। इंडियन रिसर्च फंड एसोसिएशन के न्यूट्रिशन ऐडवाइजरी कमेटी ने भारतवर्ष के लोगों की आवश्यकता के लिये साल भर में १०,२०० करोड़ अंडों की खपत कूती है। इस तरह से उपज आज के उपलब्ध की तिगुनी होनी चाहिए। आज हमारी मुर्गियां और अन्य पक्षी औसतन् ५० अंडे वर्ष में उत्पन्न करती हैं, हम क्रास ब्रीडिंग द्वारा उसे सरलता से १५० कर सकते हैं। अंडे का रोजगार अधिकांश निम्न कोटि के जातियों के हाथ में है। आवश्यक है कि सरकार इस उद्योग की ओर ध्यान दे और इसके स्टोर तथा यातायात का उचित प्रबन्ध करे।

भोजन की कमी को हम एक अन्य उपाय से भी दूर कर सकते हैं, वह है मछली। गांवों में असंख्य तालाब भरे पड़े हैं। उनमें मछलियों को पाल कर हम उन तालाबों की सफ़ाई भी कर सकते हैं। सब से पहले भारत के इस उद्योग की ओर १९२८ में रायल कमीशन आन् एग्रीकल्चर का ध्यान गया। उसने अपनी रिपोर्ट में लिखा है "मछली हमारे चावल वाले भोजन की एक अधिक सामग्री है।" वास्तव में बंगाल में इसका बहुत उपयोग भी होता है। केन्द्रीय और प्रान्तीय सभी सरकारों ने इसकी ओर ध्यान दिया है। हमारे प्रान्त में भी एक फिशरीज डेवलपमेंट विभाग खुल गया है।

गांव वालों के पशुपालन द्वारा उनकी आय में एक और प्रकार से वृद्धि हो सकती है। वह है शहद की मक्खियां पालने से। यदि ठिकाने से इस उद्योग में हाथ लगाया जाय तो लगभग १० करोड़ पौंड शहद हमें प्रति वर्ष प्राप्त हो सकती है। पर आज हमें लगभग ५० लाख पौंड ही प्राप्त है। विदेशों में विशेष कर अमरीका में इस उद्योग ने बहुत उन्नति कर लिया है। यहां तक कि लोग वहां पर अपनी पुत्रियों के विवाह में मधु के छत्ते को दहेज में देते हैं। शहद की मक्खी पालना एक कला है और शहद जीवन के लिये एक बहुमूल्य वस्तु है। वह हमारे भोजन की बहुत सी खामियों को दूर कर सकती है यदि हम उसका प्रयोग करें। आवश्यक है कि सरकार इस उद्योग की ओर ध्यान दे और उचित शिक्षा का प्रबन्ध करे। हमारी सरकार ने इधर काफी ध्यान दिया है और ज्योलीकोट (नैनीताल) में एक बी० कीपिंग स्टेशन और लखनऊ में एक मधु-विकास-केन्द्र स्थापित किया है।

लाख और रेशम—लाख के उत्पादन पर भारत का एकाधिपत्य है। भारत में भी उत्तर प्रदेश और छोटा नागपुर को छोड़कर अन्यत्र बहुत कम लाख उपलब्ध है। उत्तर प्रदेश के अन्तर्गत मिर्जापुर जिले में राबर्ट्सगंज, विन्ढमगंज, खैरवां, दुद्धी में इसका बाहुल्य है। इन कीड़ों के आहार के लिये पलास, कुसुम, ककूर इत्यादि वृक्षों की पत्तियां चाहिए। मिर्जापुर और छोटा नागपुर के अन्तर्गत पहाड़ी इलाकों के बन प्रदेशों में इन विटपों का बाहुल्य है। वहां लाख का उत्पादन भी यथेष्ट मात्रा में होता है। कच्चे लाख से हम बहुत सी वस्तुयें तैयार कर सकते हैं। उदाहरणार्थ, ग्रामोफोन का रेकर्ड, बटन, इत्यादि। इस तरह से इन कीड़ों को पाल कर हम देश के औद्योगिक विकास में भी सहायता पहुंचा सकते हैं और ग्रामीणों के आय में भी वृद्धि कर सकते हैं। आज इस उद्योग को इटली इत्यादि के बने कृत्रिम लाख का भय है। पर यदि इंडियन लैक सेस कमेटी वैज्ञानिक रीतियों द्वारा इसका उत्पादन और उपलब्ध सरल और सस्ता कर दे तो भय की कोई बात नहीं।

भारत का रेशम उद्योग सदा से ख्याति पाये हुए है। चीन और जापान के पश्चात् इसी का स्थान है। बर्मा के निकल जाने से इस उद्योग का प्रमुख अंश हमारे हाथ से निकल गया किंतु आज भी काश्मीर, आसाम इत्यादि पर्वतीय प्रदेशों में जहां शहतूत के पेड़ मिलते हैं हम इस के कीड़े पाल सकते हैं। इस उद्योग को सब से अधिक भय है कृत्रिम रेशम के कपड़ों से। वे देखने में सुन्दर और आकर्षक भी होते हैं और सस्ते भी, भले इतने टिकाऊ न हों जितने वास्तविक रेशम के। इसलिये इस उद्योग को सरकारी सहायता आवश्यक है। यह उद्योग हमारे लिये काफ़ी डालर भी ला सकता है।

औद्योगिक उन्नति—गांव और गांव की जनता तथा सभी भारतीयों के लिये यह आवश्यक है कि हम उद्यानों, वाटिकाओं और फुलवारियों को विकसित करें। हमारे भोजन में फल, फूल और तरकारी यथेष्ट मात्रा में हो। पर इन सब का तो अभी अभाव है। मध्यवर्ग के कुछ लोगों के कुटुम्बों में आम तौर से देखा गया है कि वे फलों का प्रयोग नहीं करते। तरकारी भी दिन ब दिन घटती जा रही है। भारत में लगभग ९० लाख टन तरकारी उपजती है पर देश की जनसंख्या के लिये यह पर्याप्त नहीं। हिन्दुस्तान में प्रायः प्रत्येक फल उपलब्ध हैं। काश्मीर में वितस्ता की घाटियों में हमें सेब, अंगूर, अनार मिल सकते हैं तो नागपुर, बुटवल में संतरे। समुद्रतट पर केले और नारियल की भरमार है। मैदानों में आमों के पेड़ों की कमी नहीं। बेर, अमरूद, फालसा, बेल, खुमानी, आडू सभी कुछ भारतमाता को प्रकृति ने दे रखा है। यह उसके संतानों पर निर्भर है कि वह इनका कैसे उपयोग करते हैं। माना कि अभी गांवों में फलों की कमी है। सतत् भारत में फल फूल और तरकारी का अभाव

हैं पर उस अभाव को हम बागबानी की एक सुदृढ़ योजना द्वारा दूर कर सकते हैं। पेड़ और फल के पेड़ लगाने का हिन्दू धर्म में एक बहुत महत्व दिया गया है। कांग्रेस के कन्स्ट्रक्टिव प्लान में से पेड़ लगाना भी एक है। इस उद्योग को उन्नति दान दे हम खाद्य संकट ही न दूर करेंगे अपितु भारत भू को शस्य, श्यामला, सुफला बना देंगे।

सहकारिता---आज के भारतीय जीवन के उत्थान के निमित्त सहकारिता नितांत आवश्यक है। जर्मनी, इटली और इंग्लैन्ड तथा अन्य उन्नतिशील देशों के ग्राम्य जीवन में सहकारिता नें एक नव नीति जागरुकता ला खड़ी की है। भारतीय ग्रामीणों की प्रमुख समस्या भूमि है। भूमि के अनार्थिक जोत के कारण राष्ट्र का बहुत बड़ा अहित हो रहा है। हिज़ एक्सलेन्सी डा० काटजू ने जब प्रथम उत्तर प्रदेश के कांग्रेस सरकार के न्याय मंत्री थे, अनार्थिक जोतों की चकबन्दी के लिये उत्तर प्रदेश सरकार के सहकारी विभाग द्वारा उचित प्रयत्न किया था। आज की भिन्न-भिन्न सरकारें चकबन्दी कर देश की पैदावार में वृद्धि करना चाहती हैं। चकबन्दी के लिये सहकारी समितियां बहुत लाभप्रद हो सकती हैं।

चकबन्दी के पश्चात् ग्रामीणों की सब से बड़ी जरूरत है द्रव्य। उन्हें कृषि और अन्य आवश्यकताओं के लिये ऋणदायनी सहकारी समितियां द्वारा कर्ज दिया जा सकता है। यह आवश्यक है कि ये समितियां किसी अनुत्पादक कार्य के लिये ऋण देनें के पूर्व बहुत सोच विचार कर लें।

उसके पश्चात उन्हें बीज और यन्त्र प्रदान करने के लिये सहकारी समितियां चाहिए। इन सहकारी समितियों में अच्छे बीजों के लिये प्रबन्ध हो। उनके रखने का गोदाम हो। इसी तरह से यन्त्र का वितरण भी सहकारी समितियों द्वारा होना चाहिये। भारत के कृषक अपने कृषि का यंत्रीकरण धनाभाव के कारण नहीं कर सकते। सहकारी समितियां इन दोनों मसलों को हल कर सकती हैं।

खेतों में पानी देने के लिये और अन्य कामों में जिनमें एक परिवार के लोग नहीं कर सकते हम गांव में एक अद्‌भुत संगठन देखते हैं। उस संगठन को एक सहकारी समिति का रूप दिया जा सकता है। इस समिति का काम हो कि खेत बोने से लेकर खेत काटनें तक की तमाम आवश्यकताओं की पूर्ति करें। कृषकों को श्रम और धन दोनों द्वारा उचित सहायता पहुंचायें।

खेतों के काटने के बाद अनाज का वितरण सहकारी समितियों द्वारा कर के हम मध्यवर्ग के लाभ को नष्ट कर सकते हैं और उपभोक्ता के भार का भी हरण किया जा सकता है।

इसी तरह जीवन के अन्य क्षेत्र में भी सहकारी समितियां बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। क्रय-विक्रय समितियों द्वारा ग्रामीणों की आवश्यकतायें उन्हें सस्ते दर पर सुलभ हो सकती हैं।

सहकारी समितियों द्वारा हम अच्छी कृषि, अच्छा व्यवसाय और अच्छे जीवन के सिद्धान्त को अधिक सुगमता से अपना सकते हैं। कुटीर उद्योग के वृद्धि और उपलब्ध के वितरण के लिये तो ग्रामीणों को इन समितियों की सबसे अधिक जरूरत है।

सारे ग्राम को हम एक सहकारी समिति के रूप में परिणत कर उनमें भिन्न-भिन्न उपसमितियां स्थापित कर हम भिन्न-भिन्न कार्यों को सहकारी समितियों द्वारा पूरा कर सकते हैं।

प्रत्येक ग्रामीण को अपने ग्राम की सहकारी समिति का सदस्य होना चाहिये। भिन्न-भिन्न उप-समितियों में उनमें से हर एक एक प्रमुख स्थान ग्रहण कर सकता है। दूसरे उनमें सहकारिता की भावना का जन्म दान देना और भी आवश्यक है।

संगठन और सहकारिता ग्रामीणों के जीवन के दो मुख्य अंग हैं। इन दोनों में सामंजस्य और मिलाप होना आवश्यक है। इसके लिये यदि सरकार सहकारी विभाग और पंचायत राज विभाग एक में मिला दे तो अधिक उपयुक्त होगा।

उत्तर प्रदेशीय सरकार भी सहकारिता के क्षेत्र की ओर यथेष्ट मात्रा में प्रगतिशील है। १९४६ में यहां २१,८७५ सहकारी समितियां थीं और अब ३४,२९५।

स्वास्थ्य और सफाई—जीवन में स्वास्थ्य और सफाई का बहुत महत्व है। उन्नत ग्राम के उन्नतिशील जीवन में स्वास्थ्य और स्वच्छता को प्रथम स्थान प्राप्त होगा। अच्छे स्वास्थ्य का प्रथम चिन्ह है अधिक दिन जीना और भारतीयों की औसत आय २३ वर्ष से भी कम है। दूसरा मृत्यु और जन्म दर का अनुपात है। यदि हम संसार के विविध देशों से भारत की तुलना करें तो निम्नांकित तालिका पायेंगे।

प्रति एक हजार की आबादी में मृत्यु दर और जन्म दर* १९४१-४३

देश			दर	
			जन्म	मृत्यु
इंगलैंड और वेल्स	..	..	१६.३	१२.१
फ्रांस	..	..	१५.९	१६.४
जर्मनी	..	..	१६.२	१२.६
बेल्जियम	..	..	१४.८	१३.५
हालैंड	..	..	२३.०	१०.१
स्पेन	..	..	२२.८	१३.२
नार्वे	..	..	१५.७	..
स्वीडन	..	..	१९.३	१०.१
डेनमार्क	..	..	२१.४	९.६
यू० एस० ए०	..	..	२२.६	११.७
केनाडा	..	..	२४.०	१४.०

*Population—National Planning Committee Report—p. 8

देश			दर	
			जन्म	मृत्यु
आस्ट्रेलिया	..	..	२०.७	१०.३
इटली	..	..	२०.५	१४.२
भारत	..	..	३२.०	२२.०

उपर्युक्त सारिणी से इतना स्पष्ट है कि यहां की मृत्यु और जन्म दर दोनों संसार के सभी उन्नतिशील राष्ट्रों से बढ़कर हैं। इसका स्पष्टीकरण यही है कि हमारा स्वास्थ्य बहुत गिर चुका है। भारत में लगभग ६,०१,३७० अंधे हैं। इनकी संख्या प्रति लाख जनसंख्या पीछे १७२ है। प्रति एक लाख पीछे ६६ गूंगे और बहरें जिनकी संख्या २,३०,८९५ हैं, ३४ पागल जो संख्या में ९८,४४९ हैं, ४२ कोढ़ी जिनकी संख्या १,४७,९११ हैं। प्रति रोज लगभग १४ भारतीय क्षय के रोग से अंतिम सांसें तोड़ देते हैं। अस्पताल की बहुत कमी है। अस्पतालों में विस्तर की और भी कमी है। गांव में तो सरलता से दवा नहीं प्राप्त हो सकती। वहां हैजा, ताऊन, चेचक, मलेरिया किसी न किसी रोग का सदा दौरा लगा करता है।

नेशनल प्लैनिंग कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में प्रति मनुष्य के रहने के लिये १०० वर्ग फीट भूमि आवश्यक मानी है। बम्बई प्लान में प्रति मनुष्य के घर के लिये इससे अधिक भूमि की आवश्यकता समझी गई है। पर आज के ग्रामीणों के पास न खाने को अन्न है, न पहनने का कपड़ा, न रहने को घर, न पीने को स्वच्छ जल, न रोग के समय औषधि, तो भला वे स्वस्थ क्यों कर रहें और अकाल में ही काल के विकराल गाल में क्यों न समा जायं। पुरुष तो एक ओर नारी के लिये तो और भी कुछ नहीं। जच्चा और बच्चा को प्रकृति और ईश्वर के भरोसे छोड़ दिया जाता है। इसीलिये बहुत से शिशु जन्म लेते ही आंखें मूंद लेते हैं और बहुत सी मातायें जन्म देते ही सुरधाम सिधार जाती हैं।

नये अस्पताल खोलना, गड्ढों को बन्द करना, अच्छे पानी के कुयें बनवाना, सोकन गड्ढे बनवाना, हवादार मकान बनवाना, इत्यादि ग्राम के स्वास्थ्य और सफाई के हेतु नितान्त आवश्यक हैं। इस कार्य को सरकार को ग्रामीणों की सहायता से करना चाहिये।

शिक्षा और व्यायाम

शिक्षा—यदि हम भारत के विविध प्रान्तों की जनसंख्या से शिक्षित वर्ग का अंश और प्रान्त की कुल आय में शिक्षा पर खर्च किये गये धन का अंश निकालें तो नीचे की सारिणी पायेंगे।

सन् १९४२–४३

प्रान्त	पाठशालाओं की संख्या	विद्यार्थियों की संख्या	कुलजन संख्या में शिक्षित वर्ग का प्रतिशत अंश	कुल आय का शिक्षा पर व्यय हुआ प्रतिशत अंश
बंगाल संयुक्त	५५,००४	३८,६५,३३२	६·४	१३·४
मद्रास	३८,७६२	३४,००,१६६	६·८	१५·५

प्रान्त	पाठशालाओं की संख्या	विद्यार्थियों की संख्या	कुल जन संख्या में शिक्षित वर्ग का प्रतिशत अंश	कुल आय का शिक्षा पर व्यय हुआ प्रतिशत अंश
बिहार	२५,८६०	११,४५,६३५	३·१	१०·९
उत्तर प्रदेश	२५,०२०	१७,९३,८६४	३·२	..
पंजाब संयुक्त	१९,३४७	१४,३६,३७१	५·१	११·५
बम्बई	२२,८५२	१८,०९,७३४	८·६	१३·६
आसाम	११,७००	५,४८,१८९	५·३	१३·७
मध्य प्रान्त और बरार	६,७१९	५,४१,४२२	३·२	७·५
उड़ीसा	..	३,३४,०३६	३·८	..

इस तरह हम देखते हैं कि हममें शिक्षित वर्ग का भी अंश बहुत कम है और शिक्षा पर हम खर्च भी बहुत कम करते हैं। यदि हम सरकार द्वारा स्वीकृति प्राप्त पाठशालाओं में पढ़ते हुये लड़के और लड़कियों का वितरण करें तो नीचे की तालिका पाते हैं* :—

१९४२–४३

		लड़के	लड़कियां
प्रारम्भिक पाठशालाओं में	..	८५,६६,९३८	३०,२७,४२०
हाई स्कूलों में ..	..	११,०९,२६५	१,७०,५८१
कालेजों में ...	..	१,३४,८४२	१३,८९२

इस तरह प्राइमरी स्कूल के पश्चात् १२.८ प्रतिशत लड़के और ५.७ प्रतिशत लड़कियों ने हाई स्कूल की शिक्षा ग्रहण की। वहां से निकाले हुये विद्यार्थियों में से लगभग १२.१ प्रतिशत युवक और ७.६५ प्रतिशत युवतियों ने कालेज में प्रवेश किया। यह है हमारे देश की शिक्षा। यदि हम विदेशों के विद्यार्थियों के आंकड़े देखें तो निम्नांकित तालिका पायेंगे।

कुल विद्यार्थी	यू० एस० ए०	फ्रांस	इंग्लैंड और वेल्स	केनाडा
१— प्रारम्भिक	२,०३,५६,५००	४८,७०,०८२	५०,२२,०६८	२०,१३,५४१
२—माध्यमिक	६९,२३,५३८	३,४६,४४७	१,००,८००	..
३—प्राथमिक शिक्षा के विद्यार्थियों का माध्यमिक शिक्षा के विद्यार्थियों में अनुपात	३४.१९%	७.११%	२०%	..

*National Planning Committee Report—Education.

कुल विद्यार्थी	यू० एस० ए०	फ्रांस	इंगलैंड और वेल्स	केनाडा
४—विश्वविद्यालय कालेज और टेकनिकल क्लासेज़	१२,५९,०४५	१,०२,७३१	४०,०१९	१,०६,८४६
५—माध्यमिक शिक्षा के विद्यार्थियों से यूनिवर्सिटी इत्यादि के विद्यार्थियों का अनुपात	१८.१८%	३०%	४%	५.३%

उपर्युक्त सारिणियों से हमारा शिक्षित अंश और विदेशों की दृष्टि में उनकी तुलनात्मक समीक्षा दोनों ही उठती हैं।

शिक्षा को उन्नति प्रदान करना तो सबसे अधिक आवश्यक है। गांवों में बच्चे किशोर भी नहीं होने पाते कि मां बाप उन्हें नौकर बना देते हैं। वास्तव में उनका दोष नहीं। दोष है तो हमारी दीनता का। मां बाप बच्चों को खिला पिला नहीं सकते। प्रारंभिक शिक्षा का निःशुल्क और अनिवार्य होना तो आवश्यक है। उसके उपरान्त शिशु को उसके मनोनुकूल शिक्षा का प्रबन्ध करना चाहिये। बेसिक शिक्षा के लिये हमें लगभग २० लाख अध्यापकों की आवश्यकता होगी जबकि अभी कुल ३½ लाख ही अध्यापक हैं। सब से बड़ी कमी तो हमारे यहां अध्यापकों की है। इसके लिये सरकार को शिक्षकों के लिये अधिकाधिक ट्रेनिंग स्कूल खोलना चाहिये। हर गांव में प्राइमरी स्कूल होना चाहिये। उसकी इमारत को हम वहीं की मिट्टी, घास, फूस और श्रम से कम दामों में बनवा सकते हैं। लड़के और लड़की दोनों की पढ़ाई की उचित व्यवस्था होनी चाहिये। आज के वृद्ध-वृद्धा और युवा-युवती किसान को जिसने विद्या के नाम अंगूठा लगाना सीखा है हमें रात्रि पाठशालाओं द्वारा शिक्षा देनी चाहिये। गांवों में सैनिक शिक्षा का भी उचित प्रबन्ध होना चाहिये। शिक्षा की व्यवस्था के लिये नेशनल प्लानिंग कमेटी ने सलाह दी है कि सरकार को ५०० करोड़ रुपये का एक ऋण लेना चाहिये। विद्या के निमित्त लोग और पैसे वाले लोग बहुत कुछ दान करते हैं। अतः इस ऋण पर यदि उन्हें कुछ भी नहीं अथवा बहुत कम दर पर सूद दिया जाय तो भी वे आसानी से इसे दे देंगे।

हमारे प्रान्त के माननीय शिक्षा मंत्री का प्रारंभिक और ग्रामीण शिक्षा की ओर होता हुआ प्रयत्न सराहनीय है। ५ वर्षों में २२००० पाठशालायें खोलने का विचार है। ६७४० खुल चुके हैं। १९४९-५० तक ४४०० और खुल जायेंगे।

जहां तक व्यायाम का प्रश्न है गांव में अखाड़े, खेल कूद के स्थान, व्यायामशालायें खुलनी चाहिये। उत्तर प्रदेश में पंचायत राज विभाग द्वारा इस ओर काफी काम करने की आशा की जा रही है।

मनोरंजन—भले ही ग्रामीण किसान और उसका परिवार विद्या अथवा वर्णमाला से अपरिचित हो परन्तु वह कला शून्य नहीं। अतीत के संस्कृत का कोई चिन्ह यदि मिल सकता है तो भारतीय किसानों की झोपड़ियों में। उनके घरों में गेरू से बनी हुई टेढ़ी मेढ़ी तस्वीरें इस बात की द्योतक हैं कि कला की हत्या नहीं हुई है। त्यौहारों पर बने हुए चौक चित्रकला के आदर्श नमूने हैं। संगीत तो उनकी नस नस में भरा है। वह गा गाकर काम करते हैं। ग्रामीण गीतों का एक संग्रह पंडित राम नरेश त्रिपाठी ने किया है और लगभग ३६,००० गीतों का दूसरा संग्रह, जिनमें सारे भारत के गांव गीत सम्मिलित हैं, श्री देवेन्द्र सत्यार्थी ने किया है। उन गीतों को पढ़ कर हम यह स्वप्न में भी नहीं कह सकते कि ग्रामीण कला शून्य अथवा संगीत विहीन है।

यही कलायें और गीत उनके जीवन के मनोरंजन हैं। खेल कूद के लिये उन्हें बहुत कम अवसर मिलता है। अवसर पाने पर वे कबड्डी, चीलहमान डंडा, इत्यादि खेल खेलते हैं। मेले उनके मनोरंजन के प्रमुख साधन हैं। राम लीला और रास लीला द्वारा उनका मनोरंजन

काफी मात्रा में हो जाता है। भिन्न भिन्न त्योहारों द्वारा केवल उनका मनोरंजन ही नहीं होता अपितु उनमें एक संगठन की भावना भर जाती है।

पर आज के मनोरंजन के साधनों से वे बहुत दूर हैं। धीरे धीरे वे साधन उन तक पहुंच रहे हैं और धीरे धीरे वे उन्हें अपना भी रहे हैं।

उन्नत ग्राम के निर्माण की आज हमें कितनी जरूरत है इसे लिखा नहीं जा सकता यदि हम उपर्युक्त तेरह बातों का समुचित प्रबन्ध करें तो ग्रामोन्नति के क्षेत्र में विशेष प्रगति ला सकते हैं। भारत में भूमि को सब से उच्च स्थान दिया गया है। उसे धरती माता के नाम से पुकारा गया है। आज वही यहां की स्वर्ण प्रसवनी भूमि भारतीय जनसंख्या के आहार भर की सामग्री न उत्पादित कर सके आश्चर्य का विषय है। स्पष्ट है कि दोष मिट्टी का नहीं बलिक उस मिट्टी के प्रयोजकों का है। किसी ओर निकल जाइए, हरित परिधान धारण किये पृथ्वी इस बात का स्पष्ट प्रमाण देती है कि भारत में अन्न का अभाव नहीं। फिर भी सत्य यही है कि अन्न का अभाव है। यह हमारी अकर्मण्यता का द्योतक है।

दूसरे किसी भी भारतीय को अधिक वस्त्र की आवश्यकता नहीं है। वर्ष के ८ माह में तो हमारा काम कुछ थोड़े से वस्त्रों द्वारा ही पूरा हो सकता है फिर भी लीग आफ नेशन्स द्वारा निर्धारित ३० गज कपड़ा, प्रति मनुष्य प्रति वर्ष तो हमें मिलना ही चाहिये। देश का उत्पादन इससे कम है। ग्रामों में अधिकांश भारतीय वस्त्र विहीन हैं। वहां के चरवाहे, गड़रिये, धरिकार और अन्य जाति के व्यक्ति एक लंगोटी पहन दिन काट देते हैं। सर्दी की रातें अलाव के समीप एक जीर्ण शीर्ण कमरी लपेट ठिठुरते हुए तो अधिकांश ग्रामीण बिताते हैं। अन्नाभाव के पश्चात वस्त्राभाव और वह भी कब जब रूई उत्पादकों में संसार में हम द्वितीय स्थान रखते हैं। अन्न और वस्त्र के पश्चात् ग्रामीणों के रहने का घर देखिए, गांव के ठाकुर अथवा मुखिया की देहली और हवेली भी कच्ची ही होती है। बहुत से घरों पर खपरैल भी नहीं रहता। ईंट, सीमेंट और इस्पात के मकान वहां कहां, हैं भी तो दस बीस गांवों में एकाध। फिर इन मकानों का बंटवारा। गांव में जितनी जातियां हैं उतने ही स्थानों पर गांव वालों के घर बंटे रहते हैं। गांव के एक ओर ब्राह्मणों के रहने की 'बभनौटी' है, दूसरे स्थान पर कायस्थों का 'कैथाना, तीसरे स्थान पर क्षत्रियों का 'ठाकुराना', कहीं नाइयों का 'नउवाना', है तो कहीं चमारों की 'चमरौटी'। गांव के ये विभिन्न अंग उन जातियों की श्रेष्ठता और निम्नता के अनुपात में ही गंदे और साफ भी रहते हैं। जाति भेद के उन्मूलन के निमित्त घरों के इस वितरण को निर्मूल करना और भी आवश्यक है। एक ही गांव में एक स्थान पर यदि थोड़ी सी सफाई है तो दूसरे स्थान पर गंदगी का बाहुल्य। अब स्वास्थ्य और रोगों की ओर दृष्टि डालिये। गांव का किसान मार्तन्ड की प्रचन्ड किरणों में काम करने के पश्चात् कोई पोषक आहार नहीं पाता। दिनकर की किरणें उसकी रक्षक होने के बजाय भक्षक बन जाती हैं। कुछ किसानों को रतौंधी आने लगती है। इस रतौंधी के उचित उपचार का न उनके पास साधन ही है, न धन ही। इसी तरह और न जाने कितने रोग उसे घेरते जा रहे हैं। उसके शरीर को वे घुन के समान चलनी कर रहे हैं। सिंचाई, बीज, कटाई किसी का उचित प्रबन्ध नहीं। गोपाल के मथुरा और द्वारिका में भी गउवें भूखी मरती रहती हैं। सारे भारत में पशुओं के भोजन की कमी है। यहां का मनुष्य भूखा है। यहां के पशु भूखे हैं। यहां का मानव नग्न है, यहां के पशु उसकी नग्नता के आहेर हैं। बहुमूल्य पदार्थों के उत्पादक कुटीर उद्योग में किसी सीमा तक ताला लगा हुआ है। उनके निर्माता भूखे मर रहे हैं। उपवन वन से भी बीहड़ बन गये हैं। फल, फल, मधु देवताओं की वस्तु बनती जा रही है और भारत का मानव उससे दूर होता जा रहा है। दुनियां एक हो गई है। कास्मिक रेज और अटामिक इनर्जी के इस युग में अमरीका भारत के कितने निकट हो चुका है, एक नगर से दूसरे नगर को जो काफी दूरी पर है, पहुंचना सरल है, पर उसी नगर से थोड़ी ही दूर के गांव में पहुंचना बहुत मुश्किल है। कारण यह गांव है। वहां यातायात का साधन विद्यमान नहीं और वर्षा के दिनों में तो वहां और भी नहीं पहुंचा जा सकता। शिक्षा शून्य के समान है।

कहीं है भी तो वह रामायण बचने अथवा श्री सत्यनारायण के कथा तक ही सीमित है। मनोरंजन तो एक प्रकार से है ही नहीं। आधुनिक मनोरंजन के साधनों से तो वह बिलकुल अपरिचित है। ऐसे भारतीय ग्राम को हमें उन्नति प्रदान करना है। ऐसे सोये लोगों को जगाना है। उसके लिये आज हमारे पास तीन ही अस्त्र विद्यमान हैं और वे हैं संगठन, प्रचार और विद्युत। इन तीनों से हम यहां के रोग, अविद्या, अहंकार और अंधकार सभी को नष्ट कर देंगे और प्रत्येक ग्रामीण को उन्नत जीवन बिताने का अवसर प्राप्त हो सकेगा। तभी ग्राम की उन्नति होगी। यहां के कृषि की उपज बढ़ेगी। किसान धनधान्य पूर्ण होंगे। कुटीर उद्योगों की उन्नति होगी। गरीब किसानों की झोपड़ियां अच्छे घरों का रूप लेंगी। उनकी नग्नता दूर होगी। पहनने के लिये प्रचुरमात्रा में और ऋतु अनुसार वस्त्र होगा। उनके स्वास्थ्य के लिये उचित मनोरंजन और व्यायाम का प्रबन्ध होगा। प्रसूता और रोगियों के अस्पताल होंगे। शिक्षा का उचित प्रबन्ध होगा। हमारे ग्रामीण आधुनिक विज्ञान से दूर न होंगे। उनमें संगठन और सहकारिता की भावना होगी। देश प्रेम और बन्धु प्रेम का समन्वय रहेगा और उनकी राजनैतिक, आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टिकोण में समयानुकूल परिवर्तन होगा तथा शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक शक्तियों के विकास का मार्ग प्राप्य हो सकेगा।

उन्नतिशील जीवन

महात्मा गांधी का कथन है 'स्वावलम्बन ही स्वराज्य है'। यदि हम अपने पावों पर नहीं खड़े हो सकते तो हमें सर्वदा दूसरों द्वारा शासित होना पड़ेगा। अन्योन्याश्रित के सिद्धांत को तज कर ग्रामीणों ने आत्मनिर्भरता के सिद्धान्त को अपनाया है। आज भी उन्नतिशील जीवन के लिये स्वावलम्बन अनिवार्य है। आज के ग्राम्यावस्था और उन्नत ग्राम के एक अंग को हम पूर्व के प्रकरणों में देख चुके हैं। यहां यह कहना कि उन्नत ग्राम का अर्थ उन्नतिशील जीवन अवश्यमेव न होगा, आवश्यक है। उन्नतिशील जीवन के लिये शारीरिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति अनिवार्य है।

शारीरिक उन्नति के लिये आर्थिक उन्नति जरूरी है। यदि हमारे पास भोजन, वस्त्र, रहने का स्थान और खेलने का मैदान न होगा तो हमारी उन्नति नहीं हो सकती। शारीरिक विकास के लिये आर्थिक विकास होना चाहिये। गांव के आर्थिक विकास पर हमारे राष्ट्र की सुरक्षा का प्रश्न निर्भरित है।

शारीरिक विकास के साथ मानसिक विकास भी आवश्यक है। मानसिक विकास तभी हो सकता है जब मनुष्य पूर्णतया स्वस्थ हो। अपनी आर्थिक समस्या को हल कर मानस की उन्नति की ओर हमें ध्यान देना चाहिये। मानसिक विकास के लिये सब से जरूरी यह है कि हम में से कोई भी अविद्या अथवा अंधकार के दुर्निवार में न फंसा हो। विद्या और शिक्षा दोनों भारत की प्रथम आवश्यकताओं में से हैं। विद्या ही सब का आधार है। कहा है:—

विद्या ददाति विनयं विनयाद्याति पात्रताम्,
पात्रत्वाद्धनमाप्नोति धनात्धर्मं ततः सुखम्।

विद्या से विनय, विनय से पात्रत्व, पात्रत्व से धन, धन से धर्म, और धर्म से सुख मिलता है। अब प्रश्न है कि विद्या किस प्रकार की हो। सभी कालीदास, भवभूति, क्षेमेन्द्र, रवींद्रनाथ, प्रेमचन्द्र, जय शंकर प्रसाद, मिल्टन, कीट्स, शेक्सपीयर अथवा गालिब और दाग को पढ़ कर अधिक लाभ नहीं उठा सकते। साधारण और विशेष दो प्रकार की शिक्षायें आवश्यक हैं। हमें ऐसी शिक्षा चाहिए जो हमें स्वावलंबी और उत्पादक बनाये न कि बाबू। जहां तक प्रारंभिक शिक्षा का प्रश्न है उसका तो निःशुल्क और अनिवार्य होना आवश्यक है। दूसरे यदि प्रारंभिक शिक्षा का भार देश की स्त्रियों के हाथ में सौंप दिया जाय तो और भी अच्छा है। माता का हृदय शिशुओं के विकास के मार्ग को अधिक प्रकाशित कर सकता है। प्रारंभिक शिक्षा के पश्चात् की शिक्षा को हमें व्यावसायिक दृष्टिकोण से देनी चाहिये। जीवन में प्रवेश करने के पश्चात् और तब जब हम स्वावलंबी हो चुके हैं, हम दर्शन और साहित्य का अध्ययन कर सकते हैं। इनका अध्ययन तभी संभव और सफल भी है। इनके अध्ययन से हमारे मस्तिष्क को खाद्य-सामग्री मिलेगी और शरीर की खाद्यान्न समस्या भी हल हो जावेगी। यह तात्पर्य नहीं कि सभी को दस्तकारी ही की शिक्षा दी जाय, पर जितनी महत्वपूर्ण दर्शन और साहित्य की शिक्षा है उतनी ही काम करने और अर्थ शास्त्र की भी।

हर गांव में रेडियो हो, पुस्तकालय हो, अस्पताल हो, पाठशाला हो और ग्राम पंचायत घर हो। ग्रामोन्नति और उन्नतिशील जीवन के ये चिन्हमात्र हैं।

शारीरिक और मानसिकविकास के पश्चात् आत्मिक उन्नति अपने आप हो उठेगी। हमारा विश्वास है कि भौतिक उन्नति के पश्चात ही आध्यात्मिक उन्नति संभव है। हमें आदर्शवादी बनने के पहले यथार्थवादी बनना चाहिये। केवल भौतिकता की ओर न हमें ध्यान देना है, और न "खाओ, पिओ, मौज करो" के सिद्धान्त को अपनाना। पर आकाश में सिर रखने के

पहले हमें देख लेना है कि हमारे पांव पृथ्वी पर दृढ़ता के साथ टिके हैं अथवा नहीं। बौद्धिक और आध्यात्मिक शक्तियां राष्ट्र की उन्नति के लिये आवश्यक हैं, यह हम मानते हैं पर उनका स्थान पीछे है, पहले नहीं।

भारत एक अनेक धर्मानुयायियों (सेक्युलर) का देश है। यहां सभी धर्म के अनुयायियों को समानाधिकार प्राप्त है। उन्नत ग्राम के उन्नतिशील जीवन का आधार हमें धर्म नहीं बनाना है और यदि धर्म बनाना है तो हमारा धर्म है देश भक्ति, राष्ट्रीयता और बंधु प्रेम। कुल की मर्यादा का नहीं अपितु देश की मर्यादा का भारतीय ग्रामीणों को ध्यान रखना है, नहीं तो शेक्सपीयर के कथन" अपने सम्मान की रक्षा करो अन्यथा अपने अच्छे जीवन का परित्याग करो" (Defend your reputation or bid farewell to your good life) के ही अनुकूल चलना होगा।

शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक विकास का अर्थ होगा हमारा चरित्र उत्थान। चरित्र के दृष्टिकोण से तो ग्रामीण और नागरिक प्रायः सभी भारतीय बहुत निम्न कोटि में रखे जा सकते हैं। कुछ दृष्टान्त लीजिए। गांव हमारे घी, दूध, मक्खन, मधु के वितरक हैं। आज के युग में मिलावट हमारा पाठ हो गया है। वस्तु की शुद्धता की ओर से सभी वितरकों के समान ग्रामीणों ने भी मुंह फेर लिया है। बाजार में जाइए, शुद्ध घी आप पा नहीं सकते। गांव में जाइए, जमी हुई दही में बनस्पति तेल मिला कर तब घी बनाने वाले घी मथते हैं। दूध में तो आधे से अधिक पानी मिला रहता है। फिर गाय, भैंस, बकरी सभी का दूध और ऊपर से पानी एक साथ बेचा जाता है। शुद्ध सरसों का तेल भी अप्राप्य हो रहा है। तेल पेरते ही समय अन्य हानिकारक दाने पेर लिये जाते हैं। आप लोगों ने सत्यानाशी तेल सुना होगा। मधु अथवा शहद में शीरा मिला कर बेचा जाता है। प्रायः देश की सभी वस्तुओं का यही हाल है। पूरे दाम पाने पर भी विक्रेता संतुष्ट नहीं। कुछ न कुछ मिलाना तो उसका चलन हो गया है। ग्रामीण विक्रेता भी अन्य किसी विक्रेता से इस सिद्धान्त को अपनाने में कम नहीं। अशुद्धता और विशेषकर खाद्य पदार्थ की अशुद्धता ने हमारे शरीर को चलनी कर दिया है। भारतीयों के शारीरिक सत्व का ह्रास होता जा रहा है। सरकार और जनता दोनों का कर्त्तव्य है कि पतन के गर्त के ओर न बढ़ने के लिये इस राष्ट्र अहितकारिणी प्रथा के अपनाने वालों को कठोर दंड दे।

इसके लिये और भी अधिक आवश्यक है कि हमारा चारित्रिक विकास हो। पहले तो हमें व्यक्तिगत चरित्र पर ध्यान देना है। प्रत्येक भारतीय का कर्त्तव्य है कि वह कोई ऐसा कार्य न करे जिससे राष्ट्र, देश अथवा किसी अन्य बन्धु के अनिष्ट की आशंका हो। ऊपर लिखा है कि शारीरिक, मानसिक और आत्मिक विकास का अर्थ है चारित्रिक विकास। यदि अधिक स्पष्ट किया जाय तो यह कहा जा सकता है कि राष्ट्रोन्नति के लिये सब से अधिक आवश्यक है चारित्रिक विकास और समस्त उत्थानों का वही आधार है। सारे उत्सर्गों की जड़ है। व्यक्तिगत चरित्र विकास (Individnal Character) के उपरान्त हमें सामुदायिक चरित्रविकास (Collective character) की ओर ध्यान देना है। ग्रामीण को जानना है कि देश क्या है, समाज के प्रति उनका क्या कर्त्तव्य है और उसकी पूर्ति किस प्रकार से की जा सकती है। राष्ट्र हित में उन्हें क्या करना है। मनुष्य के क्लेश को मिटाने के लिये उन्हें कौन सा उपाय और स्थान ग्रहण करना होगा।

उन्नत जीवन के पूर्व ही हमें जीवन की मीमांसा कर लेनी चाहिये। जीवन के माने ही उन्नति होते हैं। उनका जीवन ही क्या जो केवल पैदा हुए और मर गए। जीवन की परिभाषा करते हुए लांगफेलो कहता है:

'जीवन सत्य है, जिन्दगी सरगर्मी है,
और कब्र इसका लक्ष्य नहीं।'

मरना तो हमें है ही पर इसके माने यह नहीं होते कि हम अकर्मण्य, अकर्त्तव्यशील, एवं आलसी हो उठें। जन्म और मृत्यु तो रात और दिन के समान प्रकृति के दो पहलू हैं। हिन्दी कवि

श्री भगवती चरण वर्मा ने लिखा है "जीवन एक पहेली है और इस पहेली का उत्तर है मृत्यु।" उन्हीं से विचार किसी सीमा तक दार्शनिक काल्टन के भी हैं। वह कहता है "हम जिन्दगी को मृत्यु की ओर अग्रसर होती हुई एक यात्रा कह सकते हैं और मृत्यु जीवन का प्रवेश पत्र।" जीवन के अपने अंग हैं। उसे अपनाना हमारी अपनी मनोवृत्ति पर निर्भर है। उन अंगों पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है "जीवन उनके लिये राजनीति है जो षड़यन्त्र रच सकते हैं, उनके लिये अर्थ शास्त्र है जो प्रयत्नशील हैं, उनके लिये दर्शन है जो विचारमग्न रहते हैं, इतिहास उनके लिये जो भूत की अनुभूतियों से प्रदर्शित होते हैं, बुद्धिमानों के लिये विज्ञान, आदर्शवादी के लिये साहित्य, नाउम्मीदों के लिये कविता, कर्मण्य के लिये नाटक, भावुक के लिये कला।" पर हमारे ग्रामीण बन्धु के सन्मुख इनमें से जीवन का कोई भी अंग नहीं। किसी भी अंग पर उसके लिये प्रकाश नहीं। वह पैदा होता है और मर जाता है। उसका पैदा होना ही मरने के लिये है। यह कहना कि वह कुछ करता है, सत्य की हत्या होगी। वह मनुष्य जो अपना और अपने परिवार का उदर पोषण भी पूर्णतया न कर सके, जो अपने शिशुओं के लिये वस्त्र का प्रबन्ध न कर सके, जिसके पास न घर हो, न रहने का कोई उचित स्थान, वह भी अपने को क्या मनुष्य कह सकता है? किसी प्रकार पेट भरना तो पशु-पक्षी भी यह अधम पेट भर लेते हैं। हमारा ग्राम, जीवन से शून्य है। उसमें जीवन लाना है। उन्नत जीवन का प्रश्न उसके उपरान्त उठता है।

उसके लिये आवश्यक है समाज का परिवर्तन अथवा आज की सामाजिक व्यवस्थाओं में परिवर्तन। सब को रोटी और कपड़ा मिल सके, पढ़ाई और दवाई मुफ्त हो। यह जनता के जन नायकों का ध्येय होना चाहिये। कर्मठ, निस्वार्थी, कर्तव्य परायण व्यक्तियों की जो ग्रामीणों को समझा सकें, ग्रामीण और नागरिक समान हैं, हिन्दू और मुसलमान समान हैं, नारी और पुरुष समान हैं—आवश्यकता है। राष्ट्र की ३३ प्रतिशत आय एक व्यक्ति को, ३३ प्रतिशत ३३ व्यक्ति को और शेष ३४ प्रतिशत ६६ व्यक्तियों को मिलना जीवन के पतन का चिन्ह है। उसमें सामंजस्य स्थापित करना चाहिये।

दर्शन का एक अंग इस बात की पुष्टि करता है कि हम 'अहम्' से ऊपर नहीं उठ सकते पर उसे असीमित तो अवश्य किया जा सकता है। उन्नत जीवन के लिये आवश्यक है कि हम लघु स्वार्थ और क्षुद्र चेतना के शिकार न हों।

रूढ़वादिता और परम्परा प्रियता को तोड़ना ग्रामीणों में उन्नतिशील जीवन लाने के लिये आवश्यक प्रयास होगा। हिंदू मुसलमान के यहां पानी नहीं पीता। शादी विवाह तो दूर की बात है। एकता आज की प्रथम आवश्यकता है।

चारित्रिक विकास और सामाजिक परिवर्तन के लिए ग्रामीणों को उसी प्रकार से शिक्षित करना है। उसके लिये आधुनिक शिक्षा की आवश्यकता नहीं। गांधी जी इंडियन होम रूल में कहते हैं "स्पष्ट है कि हमें इस शिक्षा के अनिवार्य करने की कोई आवश्यकता नहीं। हमारी प्राचीन पाठशाला पद्धति ही यथेष्ट है। हम तुम्हारे आधुनिक स्कूलों को व्यर्थ समझते हैं"। हमें अपने ग्रामीण बन्धुओं को अपने सांस्कृतिक दृष्टिकोण से शिक्षित करना है। भले ही मेकाले कहे "हमें कौन सा हक है कि हम उदात्त दर्शन शास्त्र और सही इतिहास को एक तरफ रखकर जनता का धन ऐसे चिकित्सा शास्त्र पर जिसे पढ़ने को विलायत का एक नालबन्द भी अपनी जिल्लत समझे, ऐसे ज्योतिष शास्त्र पर कि जिस पर अंगरेजी स्कूल की एक लड़की को भी हंसी आवे, एक ऐसे इतिहास पर जिसमें तीस तीस फुट लम्बे राजा भरे पड़े हों और जो ३० हजार वर्ष राज्य करते हैं, एक ऐसे भूगोल पर कि जिसमें मक्खन और मधु के समुद्रों का वर्णन है, खर्च करें।"—पर हम इतना भली भांति कह सकते हैं कि उसके द्वारा प्रचलित शिक्षा पद्धति ने हमारे विनाश के बीज बोए हैं। उनमें परिवर्तन लाना है और अपने ग्रामीणों को आज के विज्ञान, इतिहास और दर्शन के साथ अपनी संस्कृत की थाती पाठशाला पद्धति को भी सौंपना है।

राजनैतिक चेतना का उन्नतिशील जीवन में कितना महत्व है इस पर भी कुछ कहना आवश्यक है। देशाटन के नाम से तो हमारे ग्रामीण अपरिचित हैं। उनमें से अभी बहुत से ऐसे हैं जिन्होंने रेल यात्रा भी न की होगी। अनुभव और अध्ययन दोनों से शून्य भारतीय ग्रामीण में एक ऐसी राजनैतिक चेतना लानी है जो उन्हें यह बता सके कि वे मनुष्य हैं। उन्हें संसार के अन्य मनुष्यों के समान जीवित रहने और जीवन के उपभोग का अधिकार है। उनका मानव और मानवता के प्रति क्या कर्त्तव्य है। उनका कार्य क्षेत्र गांव की सीमा तक निर्धारित नहीं। हिन्दुस्तान उनका है और वे हिन्दुस्तान के हैं। इसके उपरान्त विश्व के प्रति भी उनका कुछ कर्त्तव्य है। प्रत्येक स्वस्थ एवम् बालिग पुरुष और नारी को मतदान का अधिकार है।

अंत में यह कहना आवश्यक होगा कि हमें उन्नतिशील जीवन के लिए चाहिए व्यक्तिगत, शारीरिक, मानसिक और आत्मिक विकास तथा साम्प्रदायिक, सामाजिक, धार्मिक एवम् राजनैतिक प्रगति। उन्नतिशील ग्राम के लिये उन्नत जीवन आवश्यक है और भारत की उन्नति के लिये उन्नत ग्राम अनिवार्य हैं।

— इति —

पी० एस० यू० पी०—१५६६ जनरल—१९५०—१०००